ੴ सतिगुर प्रसादि ॥
गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

माघ-फाल्गुन, संवत् नानकशाही ५४३
वर्ष ५ अंक ६ फरवरी 2012

संपादक : सिमरजीत सिंघ *एम. ए., एम. एम. सी.*
सहायक संपादक : जगजीत सिंघ *एम. एम. सी.*

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन: 0183-2553956-60, फैक्स: 0183-2553919

एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

जे ओहु अठसठि तीरथ न्हावै ॥ जे ओहु दुआदस सिला पूजावै ॥
जे ओहु कूप तटा देवावै ॥ करै निंद सभ बिरथा जावै ॥१॥
साध का निंदकु कैसे तरै ॥ सरपर जानहु नरक ही परै ॥१॥रहाउ॥
जे ओहु ग्रहन करै कुलखेति ॥ अरपै नारि सीगार समेति ॥
सगली सिंम्रिति स्रवनी सुनै ॥ करै निंद कवनै नही गुनै ॥२॥
जे ओहु अनिक प्रसाद करावै ॥ भूमि दान सोभा मंडपि पावै ॥
अपना बिगारि बिरांना सांढै ॥ करै निंद बहु जोनी हांढै ॥३॥
निंदा कहा करहु संसारा ॥ निंदक का परगटि पाहारा ॥
निंदकु सोधि साधि बीचारिआ ॥ कहु रविदास पापी नरकि सिधारिआ ॥४॥

(पन्ना ८७५)

भक्त रविदास जी राग गोंड में उच्चारित उपरोक्त शब्द में फरमान करते हैं कि यदि कोई मनुष्य अठसठ तीर्थों पर जाकर स्नान कर ले; यदि वो बारह शिवलिंगों की पूजा कर ले; यदि वो लोक-कल्याणार्थ कुएं-तालाब खुदवाए, मगर इन सबके बावजूद यदि वो (गुरमुखों की) निंदा करता है तो उसकी इन शुभ कार्यों में की गई सारी मेहनत व्यर्थ चली जाती है। किसी साधु पुरुष आदि की निंदा करने वाला मनुष्य जीते-जी नरक में पड़ा रहता है, वो मानव जीवन में मुक्त नहीं हो सकता। भक्त जी आगे कहते हैं कि यदि कोई मनुष्य कुलखेति (कुलक्षेत्र, तीर्थ) पर ग्रहण का स्नान करे; आभूषणों से लदी अपनी स्त्री दान करे; सारी स्मृतिमों का श्रवण करे, मगर यह सब करते हुए भी वो महापुरुषों की निंदा करता है तो फिर इसका कोई लाभ नहीं। यदि कोई मनुष्य ठाकुरों को कई तरह के भोग लगाये; जमीन का दान करके दुनिया में शोभा पा ले; खुद नुकसान उठाकर दूसरों का काम संवारे, तो भी यदि वो निंदा करता है तो वो जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है। निंदा करने को बुरा कर्म मानते हुए भक्त रविदास जी प्रश्न करते हैं कि हे दुनिया के लोगो! तुम (भले पुरुषों की) निंदा क्यों करते हो? कितना भी कोई किसी काम की आड़ में किसी की निंदा करता रहे तो भी उसका यह बुरा कर्म सबके सामने जाहिर हो ही जाता है। भक्त जी शब्द के अंत में कहते हैं कि हमने खूब अच्छी तरह विचारा है कि निंदक पुरुष जीते-जी नरक में पड़ा रहता है अर्थात् उसे नरक में जीवन जीने वाला जानो! भक्त रविदास जी के उपरोक्त शब्द का तत्व-सार यही है कि निंदा ऐसा कुकर्म है जो मनुष्य के शुभ कर्मों को राख कर देती है। कोई मनुष्य कितना भी धार्मिक बने, लोक-कल्याणार्थ कार्य करे, लेकिन यदि वो प्रभु-भक्तों की निंदा करता है तो उसका इन अच्छे कर्मों का कोई लाभ नहीं तथा उसका जीवन नरक के समान होता है।

सिक्ख संघर्षों का प्रेरणा-स्रोत : बे-ग़म-पुरा

जात-पात, रंग-नसल, ऊंच-नीच, छुआ-छूत, अमीर-गरीब के भेदभाव का घटनाक्रम दुनिया के बहुत हिस्सों में प्राचीन समय से ही चला आ रहा था। प्राचीन समय के पन्ने ऐसी घटनायों से भरे पड़े हैं। भारत में इसका प्रभाव कुछ ज्यादा ही देखने को मिला। इसके परिणामस्वरूप अनेकों दुखदायी घटनायों का जन्म हुआ।

पहले पातशाह साहिब श्री गुरू नानक देव जी ने इन बुराइयों के विरुद्ध आवाज़ बुलंद की। गुरु साहिब ने कूड़ तथा जुल्मी शक्तियों के विरुद्ध संघर्ष करने तथा हक-सच को स्थापित करने के लिए सिक्खों को इनके विरुद्ध संघर्ष करने की प्रेरणा ही नहीं दी बल्कि खुद आगे होकर लड़ाई भी लड़ी। इस आज़ादी के संघर्ष की ज्योति जगाए रखने के लिए गुरू साहिबान तथा उनके सिंघों ने अनेकों कुर्बानियां दीं।

हर वर्ष जब फरवरी का माह आता है तो यह सिंघों द्वारा किए संघर्ष तथा उनकी कुर्बानियों की याद ताज़ा कर देता है। इस माह में १७६२ ई में अफ़गान हमलावर अहमद शाह अब्दाली ने भारी संख्या में फौज लेकर सिक्खों का नामो-निशान मिटाने का मंद इरादा किया। मलेरकोटला के पास कुप्प-रुहीड़े के इलाक़े में सिक्खों को बड़ी संख्या में घेरा डालकर बड़ा घल्लूघारा किया। सिक्खों की गिनती इस घल्लूघारे में अब्दाली की फौज से बहुत कम थी। फिर भी उन्होंने डटकर मुकाबला किया। इस जंग में सिक्ख सरदारों के सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालीआ, सरदार जस्सा सिंघ रामगढ़ीआ, सरदार चढ़त सिंघ शुकरचक्कीआ, सरदार तारा सिंघ घेबा के नेतृत्व में सिक्ख योद्धाओं ने अब्दाली की फौज का सामना करने के लिए बेमिसाल जद्दोजहद की। इस जद्दोजहद में तीस से पैंतीस हज़ार के लगभग सिक्ख शहादत प्राप्त कर गए। इन शहीद सिक्खों की यादगर भी गत दिनों पंजाब सरकार द्वारा बनाई गई है।

बीसवीं शताब्दी में अंग्रेजों की धक्केशाही के विरुद्ध सिक्खों ने मोर्चे लगाकर शहीदियां प्राप्त कीं। उनमें से 'ननकाणा साहिब का साका' तथा 'जैतो का मोर्चा' भी फरवरी माह में घटित हुआ। अंग्रेजों की शह पर महंत गुरुद्वारों की पवित्रता को भंग करने के घटिया यत्न करने लग गये। महंतों ने गुरुद्वारों की जायदादों को पुश्तैनी बना लिया और वे ऐशप्रस्त हो गये। गुरुद्वारों में महंत आचरणहीन करतूतें करने लग गये। गुरुद्वारा जन्म-स्थान श्री गुरु नानक देव जी श्री ननकाणा साहिब के महंत नरैण दास ने अपनी गुंडागर्दी की सभी हदें पार कर लीं, जिस कारण सिक्खों ने गुरुद्वारा साहिब का प्रबंध पंथक हाथों में लेने का प्रण किया। महंत ने हाकिमों की शह पर गुरुद्वारा साहिब की सीमा अंदर गुंडों-बदमाशों को इकट्ठा कर लिया। जत्थेदार लछमण सिंघ धारोवाली के नेतृत्व में गुरु के सिक्ख गुरुद्वारे का प्रबंध पंथक हाथों में लेने के लिए शांतमयी रहने का प्रण करके गए, किंतु महंत के गुंडों ने इन पर बंदूकों, छवियों तथा गंडासों से हमला करके सिंघों को शहीद कर दिया। कई सिंघ जलती हुई भट्ठी में फेंक दिये तथा कई जंड के वृक्ष के साथ बांधकर जला दिये अंत में महंत को सिंघों के संघर्ष के आगे झुकना पड़ा तथा श्री ननकाणा साहिब का प्रबंध पंथक

हाथों में आ गया।

फरवरी माह में ही 'जैतो का मोर्चा' लगा। अंग्रेज सरकार द्वारा श्री गंगसर जैतो (जिला फरीदकोट) के गुरुद्वारा साहिब में नाजायज़ रूप से हस्तक्षेप किया गया। इसके प्रतिक्रम में 'जैतो का मोर्चा' लगा। सिक्खों ने घोर यातनायें झेलकर अंग्रेजों की सिक्ख विरोधी कार्यवाही का डटकर मुकाबला किया तथा शांतमयी ढंग से रहते हुए पुलिस की लाठियों की मार खाकर भी उनको अपने अधिकारों पर काबिज़ न होने दिया। इस मोर्चे की विजय को अंग्रेजों से आज़ादी प्राप्त करने की पहली विजय भी माना गया।

घल्लूघारों एवं मोर्चों का यह इतिहास सिक्खों को सतत् अन्याय के विरुद्ध अडिग रहने, लड़ने तथा हक-सच की स्थापित हेतु प्रेरणा देता रहेगा। समाज की समस्याओं के आगे सिक्ख पंथ श्री गुरू ग्रंथ साहिब से प्रेरणा लेकर, सदैव जागृत रहकर 'बे-ग़म-पुरा' की सृजना के लिए गतिशील हो सकता है। इसमें सभी सुखी बस सकेंगे; किसी भी जुल्म, अन्याय तथा अनचाही पाबंदियों आदि से छुटकारा पा सकेंगे।

कविता

सपनों का शहर : श्री अमृतसर

*-प्रो हरमहेन्द्र सिंघ**

श्री अमृतसर मेरे सपनों का शहर
कल भी जीवित था
आज भी जीवित है
और कल भी जीवित रहेगा।
'हरिमंदर' की अरदास
मधुर गूंज गुरबाणी की
पल-पल रहेगी साथ।
बहुत पुराना इतिहास।
चप्पे-चप्पे में
गुरुओं का आशीर्वाद।
सिफती का घर बना
मेरे सपनों का शहर।
सरोवर ज्ञान-भक्ति का
बांटता मधुर प्रसाद।
सदा बनी रहे गुरु-कृपा
बरसती रहे अमृत-बाणी।
इसके बसने की रहेगी,
चलती अमर कहानी।
मेरे सपनों का शहर
तेरे सपनों का शहर।
पुष्पगंधा आज भी
सुधा बरसती आज भी
रहेगा गुरुओं का वरद हाथ
मेरे सिर ऊपर भी
तेरे सिर ऊपर भी।
अमर अजर शाश्वत
सरबत्त का भला चाहता
उठो! जागो! करो नमन!
अरदास करो!
मागो सबकी खैर।
बनो निर्भय, रहो निरवैर!
मिलेगा गुरु-आशीर्वाद तभी
जब तुम जागोगे,
मेरे सपनों के शहर, श्री अमृतसर के साथ।

१२५, कबीर पार्क, श्री अमृतसर- १४३००२, मो ९३५६१-३३६६५

'तवारीख गुरू खालसा' कृत ज्ञानी गिआन सिंघ में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन एवं शख्सियत

*-डॉ. परमवीर सिंघ**

. . . गतांक से आगे

तलवंडी साबो से गुरु जी नांदेड़ की तरफ चले गए थे। बादशाह औरंगजेब ने गुरु जी को मुलाकात के लिए बुलाया, मगर ऐसा संभव न हो सका, क्योंकि गुरु जी बघौर ही पहुंचे थे कि उनको बादशाह के देहांत की खबर मिल गई थी। यहां से गुरु जी सीधा दिल्ली आ गए थे तथा अपने स्वभाव के अनुसार सबको वैर-विरोध भुलाकर परमार्थ के मार्ग पर चलने की शिक्षा देते रहे। गुरु जी की यह शिक्षा उनके जीवन में से उस समय प्रकट होती है जब बादशाह औरंगजेब के बाद उनके पुत्रों में गद्दी के लिए युद्ध छिड़ गया था। बादशाह के एक पुत्र बहादुर शाह ने गुरु जी से गद्दी हासिल करने के लिए सहायता की मांग की थी। गुरु जी ने उसे गद्दी के योग्य जानकर उसको मदद देने का भरोसा दिया था तथा ऐसा करते समय उन्होंने उन सभी बातों को नहीं विचारा था जो मुगल हकूमत ने उनके साथ अनंदपुर साहिब, चमकौर साहिब तथा मुकतसर साहिब के युद्धों में की थीं। गुरु जी का उद्देश्य समाज को विकासशील पथ पर ले जाना था। उन्होंने अपने जीवन द्वारा यह संदेश दिया था कि समाज का विकास मात्र राज्य की प्राप्ति द्वारा संभव नहीं है बल्कि जो व्यक्ति इस कार्य को करने के लिए आगे आने का यत्न करे उसकी सहायता की जानी चाहिए। गुरु जी की सहायता से जब बहादुर शाह बादशाह बन गया तो वह गुरु जी के साथ किए इकरार से पीछे हटने लगा। उसे अपना तख्त बचाने की चिंता ज्यादा सताने लगी थी। गुरु जी राजाओं की कमजोरियों से भली-भांति वाकिफ थे। उन्होंने बादशाह का साथ छोड़कर नांदेड़ नामक स्थान से बाबा बंदा सिंघ बहादर को जुल्म का खातिमा करने के लिए पंजाब भेज दिया था। उसने पंजाब में आकर अपनी हकूमत कायम कर ली। बहादुर शाह जीते-जी उसको काबू नहीं कर सका। बहादुर शाह ने गुरु जी से किए वादे से पीछे हटकर समूचे उत्तर भारत में गड़बड़ी का माहौल पैदा कर दिया था।

गुरु जी की धर्म के मार्ग पर चलने की शिक्षा ने हर धर्म के पैरोकार को प्रभावित किया था। इस कार्य को आगे बढ़ाने के लिए जो सिक्ख एवं श्रद्धालु उनके जीवन में प्रमुख तौर पर आए, 'तवारीख गुरू खालसा' का लेखक ज्ञानी गिआन सिंघ उनके नाम भी बताता है। इन नामों को संख्या काफी लंबी है।

गुरु जी का जीवन-वृत्तांत सृजित करने के लिए लेखक स्थानीय मुहावरों का सहारा भी लेता है। लेखक एक तरफ श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को अकाल पुरख तथा गुरु नानक साहिब के खजाने में से श्रद्धालुओं पर बख्शिश करने वाला बताता है, दूसरी तरफ वह अलग-अलग इलाकों तथा वहां के लोगों की जानकारी भी साथ-साथ देता है कि किस क्षेत्र में वृक्ष कैसे हैं, मनुष्य कैसे हैं, उनकी आदतें तथा स्वभाव कैसे हैं,

**सिक्ख विश्व कोश विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२, मो: ९८७२०-७४३२२*

उनकी गुरु जी के प्रति श्रद्धा कैसी है, सिक्खी किस-किस क्षेत्र में फैल चुकी है, सिक्खी के प्रचार एवं प्रसार के लिए कौन-से ढंग अपनाये जा रहे हैं, लोगों का पहनावा कैसा है, श्रद्धालुओं का प्रेम कैसा है, लोग गुजारा कैसे करते हैं, कौन-से क्षेत्र में कौन-सा फल एवं सब्जी ज्यादा मात्रा में होती है, कौन-से क्षेत्र में दुराचार या सदाचार अधिक है, कौन-से क्षेत्र में किस तरह की मनौतें एवं वहम-भ्रम भारी हैं, बिप्रवाद के पंजे में लोक किस तरह जकड़े हुए हैं, सखी सरवर का किस-किस इलाके में प्रभाव है, लोगों के धार्मिक विश्वास और प्रभाव कैसे हैं आदि। लेखक गुरु जी के जीवन की हर एक घटना को एक कौतुक के रूप में देखता है तथा हर घटना के साथ एक शिक्षादायक व प्रेरणामयी साखी जोड़ देता है, जो पाठक को बोझिल नहीं होने देती तथा सारे वृत्तांत को निरंतर पढ़ने में रस बना रहता है। लेखक ने गुरु जी का संदेश लोगों तक ले जाने के लिए जन्म-मृत्यु तथा पुनर्जन्म की बहुत-सी साखियों का सहारा लिया है। अलग-अलग साखियों के द्वारा वह बताता है कि व्यभिचार, दुराचार तथा भ्रष्टाचार को गुरु जी की शिक्षायों में कोई स्थान हासिल नहीं है। जो व्यक्ति ये काम करते हैं वे पुनर्जन्म में पड़कर दर-दर की ठोकरें खाते हैं एवं जलील होते हैं। मानव-जन्म अनमोल है तथा इसी जन्म में ही प्रभु-प्राप्ति संभव मानी गई है। जो व्यक्ति नकारात्मक कार्यों में लगे रहते हैं वे आखिर दलदल में जा गिरते हैं। लेखक समूह साखियों में पाठकों को निराशावादी नहीं होने देता बल्कि इस बात पर जोर देता रहता है कि गुरु बख्शनहार है तथा कोई भी मनुष्य किए गए बुरे काम का पश्चाताप करके गुरु जी के साथ जुड़ सकता है। गुरु अपने सेवकों पर बख्शिश करके उनको परमार्थ के रास्ते पर डालता है। गुरु जी की शख्सियत को उजागर करते समय लेखक उस समय के तथा मौजूदा समय के सिक्खों की तुलना करता हुआ कहता है, "उस समय सिक्ख आपस में सगे भाइयों से भी अधिक प्यार रखते थे। जो गुण जिसे आता था वही गुण वे दूसरे को बड़े प्यार से सिखा देते थे। अगर कोई सिक्ख राह में थक-हार जाता तो उसको उसके साथी उसका शरीर दबाकर, दवाई दिलाकर, खिला-पिला कर तकड़ा कर लेते थे। वे आज जैसे नहीं थे जो प्यासे को पानी भी न दें तथा 'मुख में राम, बगल में छुरी' वाली भावना रखें। यह बात उस समय के सिक्खों में नहीं थी।"

प्रमुख बाणियां : श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सिक्खों को जहां शस्त्र-विद्या में निपुण किया था वहीं गुरु जी सिक्खों को शास्त्र-विद्या में भी शिक्षित करना चाहते थे। शस्त्र-विद्या का प्रेम चाहे उनको शुरू से ही था किंतु पाउंटा साहिब में निवास के समय इस कार्य के लिए खुला समय मिल जाता था, जिसके कारण उन्होंने साहित्य-रचना में भारी योगदान डाला था। पाउंटा साहिब में कवि-दरबारों ने इस रुचि को और अधिक प्रचंड कर दिया था। ज्ञानी गिआन सिंघ बताते हैं कि पाउंटा साहिब में निवास के समय गुरु जी यमुना किनारे बैठ कर छंदबंदी में बाणी-रचना करते।

जापु साहिब : दसम ग्रंथ की यह प्रमुख बाणी है जो कि नित्तनेम में तथा अमृत छकाने की बाणियों में शामिल है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में स्थान 'जपु' बाणी को जो दिया गया है वही स्थान 'जापु' बाणी को दसम ग्रंथ में प्राप्त है। यह बाणी सिक्खों में बहुत प्रचलित बाणी है। अमृत छकाते समय यह बाणी पढ़ी जाती है इससे अनुमान लगता है कि यह बाणी खालसे की सृजना से बहुत समय पहले रची गई थी।

इस बाणी के १९९ छंद हैं। इस बाणी के पहले छंद में अकाल पुरख का जो स्वरूप पेश किया गया है वह हू-ब-हू बाणी के मूल-मंत्र से मेल खाता है :

चक्क्र चिहन अरु बरन जाति अरु पाति नहिन जिह ॥
रूप रंग अरु रेख भेख कोऊ कहि न सकत किह ॥
अचल मूरति अनभउ प्रकास अमितोजि कहिज्जै ॥
कोटि इंद्र इंद्राण साहु साहाणि गणिजै ॥
त्रिभवण महीप सुर नर असुर नेत नेत बन त्रिण कहत ॥
तव सरब नाम कथै कवन करम नाम बरनत सुमति ॥१॥

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की यह बाणी अकाल पुरख की स्तुति करते हुए उसके गुणों का बखान करती है। अलग-अलग धर्मों में परमात्मा के अलग-अलग नामों का जिक्र आया है जो उसके किसी एक गुण का वर्णन करते हैं। गुरु साहिब ने प्रमुख रूप से उस समय इस्तेमाल किए जाते समूह नामों को 'जापु साहिब' में शामिल किया है।

अकाल उसतति : दसम ग्रंथ में अनुक्रमणिका के अनुसार यह बाणी जापु साहिब के बाद दूसरी बाणी है। इसके २७१ छंद हैं तथा इनके बाद आखिरी छंद आधा है। इस बाणी के आरंभ में लिखे शबद इस प्रकार हैं--*"उतार खासे दसखत का ॥ पातिसाही १० ॥"* अर्थात् यह दसवीं पातशाही के अपने हाथों की लिखित की प्रतिलिपि है। यह बाणी 'त्वप्रसादि ॥ चउपई' से आरंभ होती है। मूल पाठ से पहले अकाल पुरख का ओट-आसरा लिया गया है :

अकाल पुरख की रछा हमनै ॥
सरब लोह दी रछिआ हमनै ॥
सरब काल जी दी रछिआ हमनै ॥
सरब लोह जी दी सदा रछिआ हमनै ॥

इससे स्पष्ट है कि गुरु जी केवल अकाल पुरख को इष्ट मानकर उसकी बंदगी करने पर जोर देते हैं तथा उन पर अपनी रक्षा का भरोसा पूर्ण रूप से प्रकट करते हैं। इस बाणी में जहां अकाल पुरख की स्तुति की गई है वहीं बाहरी भेसों तथा कर्मकांडों से दूर रहकर प्रभु-प्रेम की ओर रुचित किया गया है। इसी बाणी में ही गुरु जी ने अलग-अलग विश्वासों के लोगों को 'मानस की जात' का नाम दिया है। यह बाणी मूल रूप में प्रेम तथा भाईचारे के रिश्तों को मजबूत करने के साथ-साथ अकाल पुरख को इष्ट मानकर उसी की भक्ति करने पर जोर देती है।

बचित्र नाटक : दसम ग्रंथ के एक बड़े हिस्से को पहले 'बचित्र नाटक' कहा जाता था जिसमें कई बाणियां शामिल थीं। अब दसम ग्रंथ में 'बचित्र नाटक' शीर्षक अधीन जिस बाणी का वर्णन किया गया है वो गुरु साहिब की आत्म-कथा मानी जाती है। इस बाणी के चौदह अध्याय हैं, जिनमें गुरु साहिब के जीवन-वृत्तांत के दर्शन होते हैं। इस बाणी के ४७१ छंद हैं, जिनमें गुरु साहिब अपना जीवन-उद्देश्य प्रकट करते हुए कहते हैं :

हम इह काज जगत मो आए ॥
धरम हेत गुरदेव पठाए ॥
जहां तहां तुम धरम बिथारो ॥
दुसट दोखीअनि पकरि पछारो ॥
याही काज धरा हम जनमं ॥
समझ लेहु साधू सब मन मं ॥
धरम चलावन संत उबारन ॥
दुसट सभन को मूल उपारन ॥

इस बाणी में गुरु साहिब ने जहां राजकुमारों में आए अहं को उनके विनाश का कारण बताया है वहीं साथ ही भंगाणी, हुसैनी आदि युद्धों का भी वर्णन किया है। शहजादा मुअज्जम के पंजाब आने के बारे में भी चर्चा की गई है। इस बाणी में प्रमुख रूप से संत-सिपाही के

गुणों को उजागर किया गया है, जो कि अहंकार से रहित भावना के अधीन जब्र एवं जुल्म का सामना करते हुए समाज में धर्म तथा सदाचार की चेतना पैदा करते हैं।

चंडी चरित्र उकति बिलास : इस बाणी के लगभग ७०० सलोक हैं। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इन सलोकों को अपने ढंग से पेश किया है। गुरु जी का उद्देश्य साधारण भारतीय जनता को धर्म-युद्ध के लिए तैयार करना था। लोगों के मन में प्रचलित कथा-कहानियों द्वारा निर्भयता का गुण उजागर करने के लिए गुरु जी ने इस बाणी को उनके समक्ष रखा था।

चंडी चरित्र (दूजा) : दसम ग्रंथ में एक ही विषय पर यह दूसरी बाणी है। इस बाणी में २६२ छंद हैं। इस बाणी में स्वाभिमान, देश तथा धर्म की रक्षा के लिए वचनबद्ध होने की प्रेरणा की गई है।

चंडी की वार : इस बाणी की ५५ पउड़ियां हैं। इस बाणी का उद्देश्य साधारण लोगों में उत्साह और जोश पैदा करना है। उस समय कमजोर तथा अबला के रूप में पेश की जा रही स्त्री को बड़े-बड़े दैंत्यों के साथ लड़ते दिखाने, निर्बल हो चुकी भारतीय जनता को उत्साहित करने तथा वीर बनाने का यत्न है। इस बाणी में अकाल पुरख को सृष्टि-सृजक मानकर उसकी स्तुति की गई है। अकाल पुरख ने ही देवताओं एवं दानवों की सृजना करके उनके अंदर बल पैदा किया है, परंतु कोई भी उसका अंत नहीं पा सकता--*"बडे बडे मुनि देवते कई जुग तिनी तनु ताइआ ॥ किनी तेरा अंतु न पाइआ ॥"*

गिआन प्रबोध : इस बाणी का शीर्षक ही इसके महत्व को उजागर करता है कि यह बाणी ज्ञान का मार्ग दर्शाती है। ३३६ छंदों वाली ब्रज भाषा में गुंथी इस बाणी में मिलते विषयों के आधार पर इसे दो भागों में बांटकर देखा जा सकता है। पहले भाग में १२५ छंद अकाल महिमा से संबंधित हैं तथा शेष २११ छंद जगत के व्यवहारिक फलसफे का प्रकटावा करते हैं। यह बाणी संपूर्ण नहीं है। या तो यह संपूर्ण नहीं हो सकी और या फिर यह संपूर्ण मिली नहीं, जितनी भी मिली वही दसम ग्रंथ में शामिल कर दी गई प्रतीत होती है।

शसत्र नाम माला : इस बाणी में अलग-अलग तरह के शस्त्रों का वर्णन है। 'नाम माला' का अर्थ है- कोश, इसलिए इस बाणी को 'शस्त्रों का कोश' ही समझना चाहिए। १३१८ छंदों वाली यह बाणी पांच अध्यायों में बंटी हुई है। गुरु साहिब शस्त्रों के शौकीन थे तथा समय की परिस्थितियों को सामने रखकर उन्होंने सिक्खों को गुरु-घर में शस्त्र भेंट करने तथा संगत में शस्त्र सजाकर आने का आदेश किया था, इसलिए संगत द्वारा तरह-तरह के शस्त्र उनको भेंट किये जाते थे। जो शस्त्र कोई विशेष महत्व वाला होता था उसको शस्त्रों में शामिल करने की प्रेरणा गुरु जी खुद संगत को कर दिया करते थे। गुरु जी के समय इस्तेमाल किए जाते शस्त्रों में तेग, खंडा, कुहाड़ा, नेजा तथा तीर-कमान का प्रयोग आम देखा जाता था। इन शस्त्रों के प्रति सम्मान प्रकट करते हुए 'शसत्र नाम माला' में गुरु जी कहते हैं--*"असि क्रिपान खंडो खड़ग तुपक तबर अर तीर ॥ सैफ सरोही सैहथी यहै हमारे पीर ॥"*

तेती सवय्ये : ३३ सवय्ये वाली यह बाणी अवतारवाद से परे अकाल पुरख की स्तुति पर केंद्रित है। इन सवय्यों में यह विश्वास दिलाया गया है कि अकाल पुरख अपने भक्तों की सहायता करता है। इस बाणी में यह प्रेरणा की गई है कि परमात्मा सृष्टि के जर्रे-जर्रे में विद्यमान है। उसे छोड़कर कब्रों, मड़ियों-मसाणों, मठों आदि की पूजा नहीं करनी चाहिए बल्कि

प्रेम-भावना के जरिए प्रभु की ज्योति को अनुभव करना चाहिए। यह बाणी मूर्ति-पूजा, पत्थर-पूजा के साथ-साथ योगियों, सन्यासियों, भेसधारियों आदि के बाहरी पाखंडों पर केंद्रित है। इन समूह कर्मकांडों से बचकर रहने तथा प्रभु की भक्ति करने पर जोर दिया गया है--*"काहे कउ पूजत पाहन कउ कछु पाहन मैं परमेसर नाहीं ॥ ता ही को पूज प्रभू करि के जिह पूजत ही अघ ओघ मिटाही ॥"*

ज़फ़रनामा : इसको 'विजय-पत्र' या 'जीत की चिट्ठी' भी कहा जाता है। १७०६ ई में गुरु साहिब ने यह चिट्ठी दीने-कांगड़ गांव से भारत के बादशाह औरंगजेब को लिखी थी।

१११ शेयरों वाली इस बाणी में गुरु जी ने बादशाह को उसके अयोग्य कामों के प्रति फिटकार लगाई है तथा अपने द्वारा आरंभ किए धर्म-युद्ध को उचित ठहराया है। गुरु जी कहते हैं कि जब जुल्म हद से अधिक बढ़ जाये तथा बातचीत द्वारा उसको रोकने के सब रास्ते बंद हो जायें तो फिर तेग का इस्तेमाल जायज है :
चू कार अज हमह हीलते दर गुज़शत ॥
हलालस्सत बुरदन ब शमशीर दसत ॥

सार्थक लड़ाई

*-श्री प्रशांत अग्रवाल**

लड़ाई का मतलब, सिर्फ हाथ-पैरों की भिड़ंत नहीं होता।
लड़ाई का मतलब, सिर्फ हथियारों की जंग भी नहीं होता।
लड़ना पड़ता है हमें,
ज़िंदगी में पल-पल, पग-पग पर।
लड़ना होता है हमें,
ताकत और ज़रूरत के बीच की खाई से,
अपनी और समाज की, हर छोटी-बड़ी बुराई से।
लड़ते हैं हम,
भीड़ में पल रही तन्हाई से।
आदर-सम्मान के बीच, जगह तलाशती रुसवाई से।
और इस तरह ज़िंदगी में सभी लड़ रहे हैं
अपनी-अपनी तरह से, अपनी-अपनी जंग,
लेकिन असली बहादुर वही है,
जो जीत-हार की चिंता किए बगैर
कोई सार्थक लड़ाई लड़ रहा है।
वह, जो आदर्श का शिखर छूने के लिए,
दुर्गम पर्वत पर चढ़ रहा है।
वह, जो भोगवादी कामनाओं को पछाड़कर,
आत्मोन्नति का मार्ग पकड़ रहा है।
वह, जो दुनिया में खुशियां लाने के लिए,
पाप व जुल्म से लड़ रहा है।
जीवन-मोक्ष पाने को,
आत्म-मार्ग पकड़ रहा है।

**४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ. प्र.)। मो : ०९४११६०७६७२*

भक्त रविदास जी की धार्मिक एवं सामाजिक चेतना

-डॉ. अविनाश शर्मा*

भारतीय इतिहास का मध्य युग जहां राजनीतिक दृष्टि से पराजय का काल था वहीं सांस्कृतिक पराभव का भी युग था। भारतीय समाज जिन तत्वों के ताने-बाने से निर्मित हुआ है, उनमें वर्णों और जातियों का विशिष्ट स्थान है। जिस वर्ण-व्यवस्था को आर्यों ने कर्म-आधारित बनाया था वह कालांतर में जन्म-आधारित हो गई। इसके परिणामस्वरूप सम्पूर्ण हिंदू समाज रूढ़िवादियों की आध्यात्मिक धक्केशाही तथा तानाशाही की कठोर शृंखलाओं में कैद होकर रह गया था। जातिवाद से उत्पन्न छुआ-छूत और ऊंच-नीच की विचारधारा ने समाज को इतना कमजोर बना दिया था कि वह अपने अस्तित्व की रक्षा करने की शक्ति खोकर अपंग हो गया था। अपने ही समाज के करोड़ों व्यक्तियों को जाति के नाम पर अस्पृश्य, अल्पज्ञ एवं दलित बनाकर समाज से पृथक तथा राजनीतिक रूप से संत्रस्त व पीड़ित करके चलता-फिरता अस्थि-पिंजर बनाकर रख दिया था। यह वर्ग दो प्रकार के कष्ट भोग रहा था। एक कष्ट उनका यह था कि उन्हें उनके देशवासी अछूत कह कर घृणा करते थे। दूसरा संताप उनका धार्मिक था। समाज के नियमों तथा आचरण की संहिताओं का निर्धारण ब्राह्मण वर्ग करता था और सारी व्यवस्थाएं उसके पक्ष में होती थीं। इस व्यवस्था में तथाकथित शूद्रों की अत्यधिक उपेक्षा थी। दरिद्रता ने इस वर्ग को अधोगति के गर्त में धकेल दिया था। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब भारतीय समाज को ऐसी विकट परिस्थितियों का सामना करना पड़ा तब-तब अनेक महापुरुष सामने आए हैं जिन्होंने परंपरागत धार्मिक एवं सामाजिक बंधनों और मिथ्या धार्मिक विश्वासों को चकनाचूर करके सार्वभौम सत्य को स्थापित किया है। भक्त रविदास जी ऐसे ही महापुरुष थे जिन्होंने तत्कालीन ब्राह्मणवादी धार्मिक व्यवस्था पर पूरी शक्ति के साथ प्रहार किया और लोगों के सामने अनेक नए क्षितिजों को उद्‌घाटित किया।

मध्ययुगीन धर्म-साधना में भक्त रामानंद जी से प्रेरणा ग्रहण कर भक्त रविदास जी ने साधना एवं भक्ति को उन लोगों के लिए सुलभ बना दिया था जिनके लिए भक्ति-क्षेत्र वर्जित था। उन्होंने सामाजिक हीनता और असमर्थता की भावना को समूल नष्ट करके साधना का ऐसा भव्य एवं विशाल मंदिर निर्मित किया जिसके द्वार सबके लिए उन्मुक्त थे। उन्होंने परंपरानिष्ठ द्वष्टि के विरुद्ध सभी वर्गों को ईश्वर की भक्ति का अधिकारी माना। स्त्री हो या पुरुष अथवा किसी भी धर्म संप्रदाय का कोई व्यक्ति हो, भक्ति के द्वार सबके लिए खुले थे।

तत्कालीन समाज पर भक्त रविदास जी के प्रगतिशील व्यक्तित्व, उदार एवं समानतापरक आध्यात्मिक विचारों का खूब प्रभाव पड़ा। समानता भक्त रविदास जी का जयघोष था। इस जयघोष में उस युग की सभी समस्याओं का समाधान था। उन्होंने अपनी बाणी द्वारा समाज में फैली हुई सभी विषमताओं का घोर विरोध किया और

*१२०५, अर्बन इस्टेट, फेज-१, जलंधर-१४४०२२

धार्मिक तथा सामाजिक रूढ़िवादी विचारधारा को अपने उदार विचारों द्वारा बदल कर एक नई क्रांति और जीवन-दृष्टि को जन्म दिया।

भक्त रविदास जी ने अपनी बाणी में धर्म के सभी अंगों पर दार्शनिक भाषा में अनेक संकेत दिए हैं। भक्त रविदास जी अपने आचरण में संत और साधना में भक्त थे। उनकी भक्ति सरल एवं सहज थी। उसमें न तो योग-मार्ग की जटिलता थी और न ही भक्ति का शास्त्रीय विधान। इसमें शास्त्रीयता की अपेक्षा अनुभूति की तीव्रता थी। भक्ति के प्रति उनकी आस्था इतनी अधिक थी कि उन्होंने भक्ति को ही सर्वोपरि मान लिया। उनका विश्वास था कि जिस घर में भगवान का भक्त जन्म लेता है उसकी जाति अपने आप ऊंची हो जाती है। भक्त रविदास जी ने भक्ति को दीन-दलितों के सामाजिक उत्थान का साधन बना दिया था।

भक्त रविदास जी की साधना-पद्धति अत्यंत सहज एवं सरल थी। इसमें भगवान के प्रति प्रेम की तीव्रता, संयम पवित्रता तथा धार्मिक एवं सामाजिक दर्शन था। भक्त रविदास जी ने किसी धर्म का खंडन नहीं किया, बल्कि सभी धर्मों में समन्वय पैदा करने का यत्न किया। वे बड़ी ही सादगी के साथ अपनी बात सामने रखते हैं।

वाह्य साधनों से उन्होंने वह वातावरण एवं भूमि तैयार की जिसमें आलौकिक प्रेम का बीज अंकुरित हुआ और वही बीज विकसित होकर आत्मा का परमात्मा से एकीकरण करा देता है। इसी प्रेमानुभूति पर भक्त रविदास जी को गर्व था और इसी प्रेमानुभूति तथा प्रेमाभक्ति के आधार पर उन्होंने आत्म-तत्व और परम-तत्व की प्राप्ति की थी :

प्रेम की जेवरी बाधिओ तेरो जन ॥
कहि रविदास छूटिबो कवन गुन ॥(पन्ना ४८७)

भक्त रविदास जी की बाणी बहुतायत में नहीं मिलती। आज जो भी बाणी मिलती है उसे उनके सम-सामयिक महापुरुषों, भक्तों एवं शिष्यों ने संग्रहीत करके लिपिबद्ध किया है, जिसके प्रमाणिक हस्तलेख बहुत कम देखने को मिलते हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भक्त रविदास जी के १६ रागों में ४० पद शामिल हैं। इसे ही भक्त रविदास जी की बाणी का प्राचीनतम प्रमाणिक संग्रह माना जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आई बाणी के आधार पर कहा जा सकता है कि भक्त रविदास जी की बाणी में 'निर्गुण' के प्रति उनकी प्रबल आस्था थी। इतना ही नहीं उनमें अद्वैत के प्रति अटूट आस्था भी प्रकट होती है। डॉ. मोती सिंह के अनुसार, "संत, साधक शास्त्रविहित भक्ति को स्वीकार नहीं कर सकते थे, क्योंकि यह उनकी परंपरा, प्रकृति और बौद्धिक स्थिति के अनुकूल न थी। भक्त रविदास जी ने जातिवाद का तो आरंभ से ही उग्र खंडन किया था, फिर पांडित्य को भी उन्होंने अनावृत किया। इस कारण उस मार्ग को ग्रहण करने वाले अधिकांश तथाकथित निम्न वर्ग के ही लोग थे।"

भक्त रविदास जी ने जिस पराधीनता का विरोध किया और उसे पाप ठहराया, यह उस युग के लिए नई चीज थी। भक्त रविदास जी ने अपने युग में अकाल और अभाव की मार को झेलते सामान्य-जन की पीड़ा को दूर करने के लिए एक ऐसी व्यवस्था की कल्पना की जिसमें सभी को सभी कुछ मिले। 'बेगम पुरा' उनकी उच्च कल्पना का एक आदर्श संसार है, जिसमें मानव की सभी समस्याओं का समाधान है।

भक्त रविदास जी आध्यात्मिक एवं भौतिक समस्याओं के प्रति जागरूक ही नहीं बल्कि उनको क्रियान्वित करने को कृत संकल्प भी रहे। उनकी आध्यात्मिक चेतना सामाजिक चेतना भी थी।

भक्त रविदास जी और दलित जातीय विमर्श

*–डॉ. कृष्ण भावुक**

भारतवर्ष में जब हम तथाकथित दलित जातियों की परिकल्पना पर दृष्टिपात करते हैं तो उसका मूल उद्‌गम हमें 'मनुस्मृति' जैसे प्राचीन ग्रंथों में कुंडली मार कर बैठी हुई जातिवादी विभाजन की धारणा ही दीख पड़ती है, जिसे आधार बनाकर श्याम और श्वेत दोनों ही पक्ष चिंतकों और दार्शनिकों के ग्रंथों एवं लेखों आदि में उभर कर सामने आते हैं। इसी विवेचन के आधार पर हमारे देश में 'जातिवाद' की व्यापक भावना का उदय हुआ। तभी से जातिवादी भेदभावों की एक सुदीर्घ परंपरा भारतीय समाज के विभिन्न वर्गों या श्रेणियों के घेरों में प्रचलित और सक्रिय रही है। यह सर्वविदित है कि प्राचीन काल के दूरदर्शी ऋषियों-मुनियों ने समाज में 'जन्म' की अपेक्षा 'कर्म' के आधार पर ही जातियों अथवा वर्णों का एक वैज्ञानिक विभाजन करने का प्रयास किया था। बोधगम्य सीधे-सादे शब्दों में ऐसा भी कहा जा सकता है कि इस सुचिंतित विभाजन के पीछे उनकी परिकल्पना का मूलभूत प्रयोजन यही था कि यदि कोई व्यक्ति तथाकथित ब्राह्मण जाति में जन्म लेता है और वह अपने जीवन में किसी भी कारण से यदि कोई नीच, ओछा और गलत कार्य करता है, तो वह व्यक्ति ब्राह्मण जैसी उच्च मानी जाने वाली जाति का नहीं माना जाएगा, बल्कि वह निम्नजातीय मानी जाती श्रेणी में ही गिना जाएगा। इसके विपरीत यदि कोई तथाकथित निम्न या शूद्रवर्गीय व्यक्ति समाज की दृष्टि में कोई उच्चतर और महान माने जाने वाला सम्माननीय कार्य सम्पन्न किया करता है, तो वह तथाकथित ब्राह्मण और क्षत्रिय जैसे उच्च वर्ग में गिना जा सकता है। इसी प्रकार कार्य के सत्-असत् होने की कसौटी पर कसने के बाद ही किसी व्यक्ति के वास्तविक ब्राह्मणत्व का निर्णय हुआ करता था, न कि मात्र किसी उच्च जाति में जन्म लेने मात्र से ही सामाजिक अभिजात्य या उच्चत्व जन्मजात अधिकार बन जाया करता था।

इन शास्त्रीय नियमों के विपरीत समाज में अपना 'पद' या 'स्टेटस' बना चुकी जातियां अपनी पूर्व स्पृहणीय स्थिति को आगे भविष्य में भी बनाए रखने के लिए 'जन्म' के आधार पर ही जातियों का विभाजन मानने लगीं। इस परिवर्तन से सबसे बड़ी हानि यह होने लग गई कि जन्म से हीन समझे जाने वाले लोग अपनी योग्यता की उपेक्षा और अपने द्वारा परिश्रमपूर्वक किए जाने वाले कामों का ठीक पारिश्रमिक या पुरस्कार न मिल पाने के कारण शोषित और उत्पीड़न का शिकार बनते चले गए। बस, तभी से समाज के निम्न माने जाने वाले वर्गों और जातियों द्वारा किए जाने वाले कार्य अन्य लोग अपने 'कर्मों' की उपेक्षा सहन न कर सके। इतना ही नहीं, वे अपने से उच्चतर अन्य तथाकथित जातियों, यथा--ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के द्वारा अपने पर होने वाले निरंतर शोषण और उत्पीड़न की एक सुविचारित

*कोठी नं: २६१, गली नं: ६, जुझार नगर, पटियाला-१४७००३ (पंजाब), मो : ०९८८८४३६७५२

योजना को अन्यायपूर्ण प्रक्रिया का ही आरंभ समझने लगे। बस, वहीं से एक नए क्रूरतापूर्ण इतिहास का शुभारंभ देखने को मिलने लगा। यही वो समय था (चाहे इसका निश्चित समय और तिथि कोई भी नहीं बताई जा सकती) जब से आत्महीनता की मनोग्रंथियों की भावनाएं छोटे-बड़े वर्गों के जनों के मन में घर करनी शुरू हो गईं। भक्ति-काल में निर्गुणमार्गी भक्त कबीर जी और भक्त रविदास जी के समय में अधिक अंतर नहीं रहा है, इसी लिए इन्होंने भी जातीय भेदभाव और तज्जन्य मनोग्रंथियों के समूल उन्मूलन के लिए जन-जागरण का अभियान छेड़ दिया था। वर्तमान काल में आकर दलित-विमर्श का आंदोलन आरंभ होने पर इस शताब्दियों से उपेक्षित जाति की समाजशास्त्रीय व्याख्यायें भी बहुत की गई हैं और इस जाति से जुड़े साहित्य का मूल्यांकन और पुनर्मूल्यांकन भी खूब किया गया है। उदाहरणत: ऐसी ही व्याख्या करते हुए विभिन्न आलोचकों के मत उभर कर हमारे सामने आते हैं।

इसी संबंध में डॉ. चमन लाल ने दलित-साहित्य-विषयक अपने ग्रंथ में एक स्थल पर अपना यह संतुलित और प्रौढ़ मत व्यक्त किया है--"भारतीय समाज की जातिगत या वर्गगत संरचना दैविक विधान न होकर यहां की सामंतवादी सत्ता ने अपने वर्ग-हितों के लिए धार्मिक रूप देकर घड़ी और उसे रूढ़िबद्ध करने के लिए मनुस्मृति आदि अनेक विधि-विधानों की रचना की। आधुनिक समाज के समाजवादी दौर तो दूर, पूंजीवादी समाज में भी ऐसी सामाजिक संरचना से आर्थिक-सामाजिक विकास असंभव है। औद्योगिक समाज में (तथाकथित) भंगी, चमार आदि जातियों को छोटा या नीच कहने से कुछ भी विकास संभव नहीं है। औद्योगिक काल में हर काम एक पेशा है।"

हर देश (स्थान) और काल में चमार, भंगी, तेली जैसी तथाकथित निम्नवर्गीय जातियों का विशेष महत्व एवं योगदान रहा है, क्योंकि हमारे भारतीय समाज में हिंदू धर्म में व्यक्ति की मृत्यु के बाद दाह-संस्कार की प्रथा निभाने का शास्त्रीय विधान रहा है। शमशान घाट में शव के दहन की जिम्मेदारी भी अधिकतर 'चाण्डाल' ही पूरा किया करता है, जो कि तथाकथित निम्न और दलित जाति का ही हुआ करता है। भक्त रविदास जी ने मनुष्य का जाति-अभिमान तोड़ते हुए निम्न पंक्तियों में दर्शाया है कि जीवित व्यक्ति भले ही खुद को अन्या से उच्च समझता फिरे मगर मृत्यु होने के बाद मनुष्य के मृतक शरीर के प्रति उसके सगे-सम्बंधी ज्यादा देर तक स्नेह नहीं रख पाते:

भाई बंध कुटंब सहेरा ॥
ओइ भी लागे काढु सवेरा ॥
घर की नारि उरहि तन लागी ॥
उह तउ भूतु भूतु करि भागी ॥
कहि रविदास सभै जगु लूटिआ ॥
हम तउ एक रामु कहि छूटिआ ॥

(पन्ना ७९४)

इसी प्रसंग में डॉ. चमन लाल का यह कथन भी ठीक प्रतीत होता है : "जीवन और मरण में इतना भारी अंतर है कि 'चाण्डाल' यदि मृतकों को ठिकाने न लगाएं, तो त्राहि-त्राहि ही मच जाए, तो 'चाण्डाल' से घृणा क्यों? उसका तो सबसे ज्यादा सम्मान होना चाहिए, क्योंकि वह जीवितों को शुद्ध पर्यावरण में रखने में बड़ा महत्वपूर्ण योगदान देता है।

स्वयं भक्त रविदास जी तथाकथित चमार जाति से संबंध रखते थे। उनका कर्म भी विशेष उत्पादक रहा है। यही कारण है कि उन्होंने

अपनी जाति-बिरादरी को लोगों द्वारा ओछी, कमीनी, नीच, छोटी, घटिया आदि कहने पर भी विशेष आदर की अधिकारिणी ठहराया है। जो पंडित लोग बनारस के थे तथा भक्त जी का अपमान किया करते थे, वही उनके भक्ति-भाव से पूरी तरह से प्रभावित होकर बाद में उन्हें दंडवत् प्रणाम करने लगे थे:

--मेरी जाति कुट बांढला ढोर ढोवंता नितहि बानारसी आस पासा ॥
अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा ॥ (पन्ना १२९३)
--जाती ओछा पाती ओछा ओछा जनमु हमारा॥
राजा राम की सेव न कीन्ही कहि रविदास चमारा ॥ (पन्ना ४८६)

सामाजिक रूप से यह अत्यंत महत्वपूर्ण उत्पादक कर्म है .. ढोर ढोना, जूतियां गांठना। यह समाज का उत्पादक श्रम है। समाज में हर काम का, श्रम के हर रूप का अपना महत्व है और हर काम, हर श्रम का हर रूप सम्मानीय है। जिन देशों --यूरोप, अमेरिका, रूस, चीन, जापान आदि में ऐसी भावना रही है, वे देश आज प्रगति के शिखर पर हैं। भारत जैसे देशों में, जहां काम को जाति के साथ जोड़कर काम, श्रम तथा आदमी--सबको ऊंच-नीच के दायरे में देखा जाता हो और तथाकथित सफेदपोशों, जिनमें ज्यादातर निठल्ले रह कर सामाजिक श्रम का हिस्सा खा-खाकर मुटाते रहते हैं व श्रमिकों पर अत्याचार करते हैं, को यदि ऊंचा समझा जाता हो, तो ऐसा समाज प्रगति न कर पाने को अभिशप्त ही होगा। भक्त रविदास जी की बाणी में जो महान उपदेश और संदेश व्यक्त किए गए हैं, वे वर्तमान समय में भी अत्यंत प्रासंगिक और समयसंगत प्रतीत होते हैं। भक्त रविदास जी ने अपनी बाणी में तत्कालीन जाति-प्रथा का खंडन इस पद में किया है :

कहि रविदास जु जपै नामु ॥
तिसु जाति न जनमु न जोनि कामु ॥
(पन्ना ११९६)

भक्त रविदास जी स्पष्ट करते हैं कि जात-पात कुछ नहीं है, सभी मनुष्य एक परम पिता की ही संतान हैं। कभी वे जातिवादी धारणा को मानव-जाति का ही एक रोग कहते हैं, कभी कर्म को ही जाति का निर्धारक बताते हैं। उनको वे लोग बिलकुल मूर्ख और अज्ञानी प्रतीत होते हैं जो किसी व्यक्ति को निम्न या ओछी जाति का समझते हुए उस पर अत्याचार करते हैं। निम्न पंक्तियों में भक्त जी ने बताया है कि मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति में जाति-विभाजन बाधा नहीं बन सकता :

नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चंमारं ॥
रिदै राम गोबिंद गुन सारं ॥
सुरसरी सलल क्रित बारुनी रे संत जन करत नही पानं ॥
सुरा अपवित्र नत अवर जल रे सुरसरी मिलत नहि होइ आनं ॥
तर तारि अपवित्र करि मानीऐ रे जैसे कागरा करत बीचारं ॥
भगति भागउतु लिखीऐ तिह ऊपरे पूजीऐ करि नमसकारं ॥
मेरी जाति कुट बांढला ढोर ढोवंता नितहि बानारसी आस पासा ॥
अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा ॥ (पन्ना १२९३)

डॉ. गुरमीत सिंघ के इस विचार से भी हमारी पूर्ण सहमति है कि समाज में समानता

की स्थापना के इसी उद्देश्य से प्रेरित होकर भक्त रविदास जी ने चारों वर्णों की नये ढंग से परिभाषा की। उन्होंने स्पष्ट किया कि तथाकथित ब्राह्मण-कुल में जन्म लेने से ही कोई 'ब्राह्मण' नहीं हो जाता। जो व्यक्ति अपने जीवन में जीते-जी ब्रह्म (परमात्मा) और आत्मा का सारा ज्ञान या भेद पा लेता है, वास्तव में केवल वही 'ब्राह्मण' कहलाने का अधिकारी हुआ करता है। उनका यह दृढ़ मत है कि जो मानव काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार, इन मनोविकारों का त्याग करके अपने जीवन में सदैव धर्म के ही कार्य किया करता है, केवल वही 'सत्य पुरुष' हुआ करता है। इसी प्रकार इस जीवन में जो व्यक्ति विषय-वासनाओं से दूर होकर प्रभु को जान और समझ लेता है, केवल वही 'संत' है। भक्त रविदास जी की विचारधारा के अनुसार जो जीव दीनों-हीनों और निर्धन-जनों के लिए अपने दैहिक अंग कटवा लिया करते हैं और जीवन रूपी क्षेत्र को थक-हार कर भी नहीं छोड़ा करते हैं, केवल उन्हीं साहसी और दृढ़चित्त व्यक्तियों को वास्तविक 'क्षत्रिय' मानना-जानना अपेक्षित हुआ करता है।

जो लोग मानव-सेवा में लगे रहते हैं और अपने मन में किसी प्रकार का घमंड का भाव नहीं रखा करते हैं और साथ ही कभी भी झूठे वचन नहीं कहा करते हैं, वही वास्तव में 'सच्चे सेवक' हुआ करते हैं।

अंत में, हम कह सकते हैं कि मध्ययुगीन संतों-भक्तों में भक्त रविदास जी कुछेक अन्य संतों-भक्तों की तरह से तथाकथित निम्न जाति से संबंध तो रखते थे, परंतु तथाकथित निम्न जाति का होने पर उन्हें विशेष गर्व था। उनकी बाणी की बहुत-सी बातें आज भी पूर्णतः प्रासंगिक और समयसंगत ठहरती हैं। वे सचमुच त्रिकालदर्शी और सर्वलोकहितैषी महान संत थे।

भक्त रविदास जी ने समाज का नाम 'बेगम पुरा' घोषित किया था और इस नगर में समाजवादी सुबह की ओर संकेत करते हुए कहा था :

बेगम पुरा सहर को नाउ ॥
दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ ॥
नां तसवीस खिराजु न मालु ॥
खउफु न खता न तरसु जवालु ॥
अब मोहि खूब वतन गह पाई ॥
ऊहां खैरि सदा मेरे भाई ॥ (पन्ना ३४५)

राग गउड़ी के इस पद में भक्त रविदास जी 'बेगम पुरा' नामक एक नगर की कल्पना करते हैं, जहां किसी भी प्रकार का कोई गम अर्थात् दुख या क्लेश कभी नजर नहीं आता। जिस स्थान पर चिंता, संदेह की कभी कोई बात नहीं होती, वहां (राजा को) कभी कोई लगान या भूमि-कर चुकाने की विवशता या मजबूरी नहीं होती। इसके अतिरिक्त जहां लोगों को कोई सामान आदि भी खरीदना नहीं पड़ता, न तो उस स्थान पर किसी व्यक्ति को किसी दूसरे व्यक्ति से आतंकित या भयभीत रहना पड़ता है, न ही अपने अपराध, त्रुटि या भूल के कारण किसी के त्रास या तरस का पात्र बनने की कोई नौबत ही आया करती है। इसी प्रकार अपनी अवनति या पतन होने की वहां कभी कोई आशंका तक नहीं रहा करती।

सहायक पुस्तक :

१. डॉ. चमन लाल, 'दलित साहित्य के अग्रदूत : गुरु रविदास'

भक्त रविदास जी के सामाजिक चेतना के प्रति विचार

*-डॉ. सुरेंद्र कुमार बिश्नोई**

भारत-भूमि सदैव ही परोपकारी संत-महापुरुषों की अवतार-स्थली रही है। समय-समय पर यहां अनेक संत-महापुरुषों ने अपने महतीय कार्यों से मानवता की अलख जगाने का स्तुत्य कार्य किया है। ये संत परोपकार को लक्ष्य मानकर त्याग के मार्ग पर अग्रसर होते थे जिससे समाज पर इनकी करनी और कथनी का गहरा प्रभाव पड़ता था। भक्त रविदास जी भी परोपकार की मिट्टी से निर्मित एक उच्च कोटि के महापुरुष थे, जिन्होंने अपने व्यक्तित्व एवं विचारधारा से मध्यकालीन भारतीय समाज को एक नई राह दिखाई थी। वे त्यागी और विनम्र पुरुष थे। वे उस परमपिता परमात्मा का दिव्य प्रेम-संदेश सरसता के साथ जनमानस में प्रसारित करना चाहते थे। भक्त रविदास जी मूलत: संत-भक्त होते हुए एक समाज-सुधारक भी थे। स्व-कल्याण के साथ-साथ जन-कल्याण भी उन्हें अत्यंत प्रिय था। उनकी बाणी में तत्कालीन समाज का जीवंत रूप होने के साथ-साथ उसके सुधार की बलवती इच्छा भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उनकी बाणी में व्यक्त समाज-चेतना को जानने से पहले समाज के स्वरूप को जानना नितांत आवश्यक प्रतीत होता है।

'समाज' शब्द की व्युत्पत्ति 'सम्' उपसर्गपूर्वक 'अज्' धातु के साथ 'घज्' प्रत्यय लगने पर होती है जिसका शाब्दिक अर्थ होता है- 'मंडल', 'गोष्ठी', 'संग्रह', 'समिति', 'समुच्चय', 'दल' आदि।[१] "बहुत-से लोगों के समूह, एक ही जगह रहने वाले या एक ही प्रकार का काम करने वाले व्यक्ति-समूह को 'समाज' कहते हैं।"[२] "जिसमें लोग मिलकर एक साथ, एक गति से चलें, वही 'समाज' है।"[३]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि किसी विशेष भौगोलिक स्थिति में किसी विशिष्ट उद्देश्य को लेकर किसी निश्चित दिशा में चलने वाले व्यक्ति-समूह को 'समाज' कहा जाता है।

सामाजिक चेतना का संबंध मानव-चेतना के सामाजिक पक्ष से है। मनुष्य समाज में जीवन व्यतीत करता हुआ अनेक बुराइयों, कुप्रथाओं, रूढ़ियों, भ्रष्ट परंपराओं और विकृतियों से घिरकर घुटन अनुभव करने लगता है। यही घुटन उसे इन विसंगतियों से छुटकारा पाने के लिए जागरूक करती है और यह जागृति-भाव ही 'सामाजिक चेतना' होती है, जो समाज की परिस्थितियों को समझने एवं उनका मूल्यांकन करने की शक्ति प्रदान करती है। सामाजिक चेतना का जन्म मन के संघर्ष या संवेदनशील नेता या बुद्धिजीवियों की प्रेरणा से होता है।[४]

भक्त रविदास जी की बाणी सामाजिक चेतना से ओत-प्रोत है। वे जीवन एवं जगत के गंभीर पारखी थे। उन्होंने तत्कालीन समाज में फैले अत्याचार, व्यभिचार, पक्षपात, अन्याय, पाखंड, ऊंच-नीच की भावना, जातिवाद, संप्रदाय वैमनस्य को बहुत निकट से देखा-समझा था और उसकी पीड़ा को हृदय से अनुभव किया

*Asstt. Professor, Dyanand P.G. College, Hissar (Haryana)-125001, Mob. 09812108255

था। उन्होंने अपने दीनता भरे जीवन को तत्कालीन विषाक्त वातावरण में जीया था, इसलिए वे दूसरों के दुख व उनकी दयनीय स्थिति को अनुभव करते थे। उन्होंने अपनी बाणी के माध्यम से उन रीति-रिवाजों, प्रथाओं व रूढ़ियों का घोर विरोध किया था जो मनुष्य के पांवों में बेड़ियां डालकर उसके विकास-पथ को अवरुद्ध कर देने वाली थीं। तत्कालीन समाज में पाखंड व वाह्याचार सबसे बड़ी विकृति थी।

तत्कालीन समाज में क्षत्रियत्व के प्रदर्शन के लिए निर्बल और निरपराधी लोगों को सताया जाता था। भक्त रविदास जी ऐसे लोगों को समझाते हुए कहते हैं कि जो दीन-दुखी की रक्षा करे वही सच्चा 'क्षत्रिय' है। अर्थ सदैव ही मनुष्य को लालची बनाकर पतन की ओर धकेलने वाला कारक रहा है। भक्त रविदास जी ने अनौचित्यपूर्ण अर्थार्जन की भर्त्सना करते हुए नेक कमाई करने का उपदेश दिया है। ऊंच-नीच ही वो भावना है जो समाज में विष घोलकर व्यक्ति का जीवन दूभर बना देती है। मध्यकालीन समाज में 'शूद्र' समाज का वो अंग था जो कर्म से वंदनीय होते हुए भी हिकारत की दृष्टि से देखा जाता था। भक्त रविदास जी ने 'शूद्र' के दर्द को समझते हुए उसे 'सूदर' (पवित्र) कहा।

भक्त रविदास जी एक कर्मशील मानव थे। वे जीवन में कर्म एवं श्रम को अत्यधिक महत्व देते थे, क्योंकि सामाजिक मर्यादा तभी कायम रह सकती है जब प्रत्येक व्यक्ति मुफ्तखोरी की प्रवृत्ति त्यागकर श्रम को ग्रहण करे।

जात-पात का भेदभाव भारतीय समाज की एक प्राचीन महामारी है जो निरंतर मानवता को रुग्ण करके रखती है। मनुष्य-मनुष्य में भेदभाव की खाई उत्पन्न करने वाली यह व्यवस्था समाज में विघटन पैदा कर आपसी भाईचारे को निगल जाती है। भक्त रविदास जी जैसा समाजचेत्ता पुरुष इस अमानवीय व्यवस्था के प्रति कैसे मौन रह सकता था? उन्होंने तीव्र शब्दों में जात-पात का विरोध किया।

भक्त रविदास जी किसी भी प्रकार की हिंसा को स्वस्थ समाज के लिए घातक मानते थे। वे मानते थे कि प्रत्येक जीव परमात्मा का अंश होता है। हमें मूक प्राणियों का वध (और वह भी मात्र अपनी जिह्वा-स्वाद के लिए) कदापि नहीं करना चाहिए।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भक्त रविदास जी की बाणी में सामाजिक जागरूकता और उसके सुधार की तीव्र भावना सर्वत्र भरी पड़ी है। उनका कोई भी कथन मानव-कल्याण से हटकर नहीं है। लौकिक और आलौकिक दोनों ही विषयों में उन्होंने मानव समाज को केंद्र में रखा है, क्योंकि उनका मूल ध्येय ही समाज-सुधार व मानव-मुक्ति था। उनकी दृष्टि विशेष रूप से उस निम्न वर्ग पर गई है जो सदियों से शोषण का शिकार है। उन्होंने इस शोषण के कारणों की जड़ों तक जाकर इसके मूलोच्छेद का भरसक प्रयत्न अपनी बाणी में किया है। भक्त रविदास जी की बाणी ने अपनी वैचारिक गरिमा के बल पर सामाजिक विसंगतियों पर करारी चोट की है। वे सच्चे अर्थों में समदर्शी और समाजदर्शी थे।

संदर्भ-सूची :

१. वामन शिवराम आप्टे, 'संस्कृत हिन्दी कोश', पृष्ठ १०७६

२. रामचन्द्र वर्मा, 'हिन्दी मानक कोश', पृष्ठ २४८

३. सम्पूर्णानंद, 'समाजवाद', पृष्ठ १७

४. राईट, 'एलीमेंट्स ऑफ सोशियोलॉजी', पृष्ठ १८९

भक्त रविदास जी की भक्ति-भावना

*-श्री रुपिन्द्र शर्मा**

भारतीय धर्म-साधना के इतिहास पर दृष्टिपात करने से मध्यकालीन भारत में दो परंपरायें स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती हैं। इनमें एक परंपरा शास्त्र-सम्मत है तो दूसरी शास्त्र-निरपेक्ष। शास्त्र के प्रति आसक्ति अधिकतर ब्राह्मण भक्तों में देखी जाती है जबकि ब्राह्मणेत्तर भक्त बहुधा शास्त्र-निरपेक्ष ही रहे हैं।

मध्यकालीन निर्गुण भक्ति-धारा, जिसका प्रतिनिधित्व भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी, श्री गुरु नानक देव जी इत्यादि करते हैं, भी शास्त्र-मुक्त परंपरा के अंतर्गत ही आती है। यद्यपि मध्य काल में शास्त्र को मानने वाले भक्त साहिबान भक्ति के द्वार सभी वर्णों के लिए खोलने के पक्षधर थे तथापि समाज के लिए वर्ण-व्यवस्था को वे आदर्श मानते रहे। निर्गुण धारा के संतों ने अपने ज्ञान-रूपी नेत्रों से वर्ण-व्यवस्था के भयावह रूप और ब्राह्मणों द्वारा किए जाने वाले शोषण को अत्यंत ध्यान से देखा। उन्होंने न केवल ब्राह्मणों के बल्कि काजियों, मुल्लाओं द्वारा धर्म के नाम पर हो रहे आम जनता के शोषण को भी देखा था। उनकी बाणी उन सभी शास्त्रों, परंपराओं और रूढ़ियों का खंडन करती है जो मनुष्य को जन्म के आधार पर छोटा या बड़ा मानती है। शास्त्र से मुक्ति की इसी परंपरा में भक्त रविदास जी का नाम उल्लेखनीय है।

वास्तव में शास्त्र से मुक्ति मध्य युग में तत्कालीन परिस्थितियों में आवश्यक थी। हिंदू और मुसलमान वर्ग में वैमनस्य अत्यधिक बढ़ गया था। ब्राह्मण अपने धर्म-ग्रंथों द्वारा स्वयं को उच्च मान रहे थे और मुल्ला, काजी अपनी धार्मिक पुस्तकों के द्वारा स्वयं को। ऐसे में भक्त रविदास जी ने परमात्मा की आत्मानुभूति प्राप्त की और अपनी भक्ति-भावना द्वारा यह सिद्ध किया कि परमात्मा मनुष्य के अंतर में है, जिसे अंतःकरण की शुद्धता से ही प्राप्त किया जा सकता है। अंतःकरण की शुद्धता के लिए धार्मिक स्थान मानव का मार्गदर्शन करता है। भक्त रविदास जी की इसी भक्ति-भावना को निम्न-शीर्षकों के अंतर्गत समझा जा सकता है:

१. निर्गुण प्रभु : भक्त रविदास जी की भक्ति का मूल आधार निर्गुण प्रभु है। यह निर्गुण प्रभु जन्म से रहित है, मरण से रहित है, उसकी कोई उपमा नहीं दी जा सकती, वो जैसा है वैसा ही है:

कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करीजै ॥
जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै ॥

(पन्ना ८५८)

भक्त जी के माधव (परमात्मा का एक नाम) अवतारवाद के अर्थ में सगुण नहीं, बल्कि सर्वात्मवाद के अर्थ में ही सगुण हैं। उन्होंने माना है कि जो कमलापति के चरणों का पूजन करता है उसके बराबर अन्य कोई नहीं है। वास्तव में वो एक ही है जो अनेक रूपों में प्रसरित हो रहा है :

हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति तास

Village Kalomajra, P.O. Jhansla, Teh. Rajpura, Distt. Patiala 140601, mob. 94175-33075

सम तुलि नही आन कोऊ ॥
एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ आन रे आन भरपूरि सोऊ ॥ *(पन्ना १२९३)*

प्रेम स्वरूप परमात्मा का साक्षात्कार तभी संभव है जब उसकी शरण प्राप्त की जाए और उसे अपना सम्पूर्ण आपा समर्पित कर दिया जाए। प्रभु के नाम में वह प्रताप विद्यमान है कि अगर कोई उसके नाम की शरण ग्रहण करता है तो उसे उच्चता की प्राप्ति होती है। इसी नाम-स्मरण से भक्त रविदास जी को यह उच्चता प्राप्त हुई कि समाज के तथाकथित उच्चवर्गीय ब्राह्मण भी उन्हें दंडवत प्रणाम करने लगे :

मेरी जाति कुट बांढला ढोर ढोवंता नितहि बानारसी आस पासा ॥
अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा ॥ *(पन्ना १२९३)*

२. आत्मानुभूति पर बल : भक्त रविदास जी की भक्ति-भावना की सबसे बड़ी बात है-- आत्मानुभूति पर बल। बिना आत्मानुभूति के धर्म, धर्म न रहकर दिखावा मात्र रह जाता है। भक्त रविदास जी उन सभी वाह्याडंबरों का विरोध करते हैं जो मनुष्य ने अपने अहं को दिखाने के लिए बना रखे हैं। मनुष्य को ज्ञान की ओर ले जाने वाले कर्मों का महत्व उन्होंने स्वीकार किया है। उनकी मान्यता है कि जैसे फलों की उत्पत्ति हेतु सम्पूर्ण वृक्षों पर फूल लगते हैं और जब फल लग जाते हैं तो फूलों को झड़ जाना होता है। ठीक इसी तरह जब परमात्मा की ओर जाने वाले साधनों से ज्ञान की उत्पत्ति हो जाती है तो सम्पूर्ण कर्मों का नाश हो जाता है:

फल कारन फूली बनराइ ॥
फलु लागा तब फूलु बिलाइ ॥
गिआनै कारन करम अभिआसु ॥
गिआनु भइआ तह करमह नासु ॥
(पन्ना ११६७)

३. प्रेमा-भक्ति : भक्त रविदास जी की भक्ति-भावना प्रेम-भाव से सराबोर है। इसी कारण उन्होंने आत्मा को 'जीव-स्त्री' माना है और परमात्मा को 'पति' माना है। वास्तव में भारतीय निर्गुण संत परंपरा के अंतर्गत सभी संतों ने इसी रूपक का प्रयोग करते हुए आराधक की विरह-व्यथा का मार्मिक चित्रण किया है। यह दिव्य प्रेम तभी संभव है जब भक्त अपने मन से अहंकार को मिटा दे। भक्त रविदास जी के अनुसार जो जीव-स्त्री अपने अभिमान का त्याग कर देती है, फिर वो अपने प्रभु-पति के साथ मिलन का आनंद लेती है। मिलन के इस आनंद को प्राप्त कर लेने पर उसके मन में अपने प्रियतम के अलावा कोई दूसरा नहीं रह जाता :

सह की सार सुहागनि जानै ॥
तजि अभिमानु सुख रलीआ मानै ॥
तनु मनु देइ न अंतरु राखै ॥
अवरा देखि न सुनै अभाखै ॥ *(पन्ना ७९३)*

अपनी इसी भक्ति-भावना से विभोर होकर भक्त रविदास जी प्रभु-प्रियतम से कहते हैं कि हे माधव! अगर तुम सुंदर पर्वत हो तो मैं मोर हूं। अगर तुम चंद्र हो तो मैं चकोर हूं। तुम हमें अपने से मत तोड़ो। तुमसे तोड़ कर बताओ हम किसके साथ जोड़ें?

जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा ॥
जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा ॥
माधवे तुम न तोरहु तउ हम नही तोरहि ॥
तुम सिउ तोरि कवन सिउ जोरहि ॥
(पन्ना ६५८)

इस प्रकार हम देखते हैं कि भक्त रविदास

जी की भक्ति-भावना माधुर्य-भाव से ओत-प्रोत है जिसके अंतर्गत उनकी आत्मा जहां एक ओर अपने प्रभु-पति के विरह में व्यथित दिखाई देती है, वहीं दूसरी ओर अपना अभिमान त्याग कर प्रभु-मिलन का परम आनंद भी प्राप्त करती है और इस प्रेम-संबंध को वो किसी भी कीमत पर तोड़ना नहीं चाहती।

४. नाम-स्मरण : भक्त रविदास जी की बाणी में प्रभु-नाम-स्मरण को अत्यधिक महत्व दिया गया है। उनकी मान्यता है कि जब जीव परमात्मा के नाम के जाप द्वारा अपनी सुरति प्रभु में लीन कर देता है तभी उसे परमात्मा का साक्षात्कार होता है। शुरुआत में यह स्मरण मुख और बाणी द्वारा किया जाता है, किंतु जैसे-जैसे साधक साधना की परिपक्व अवस्था में पहुंचता है, वह सभी वाह्याडंबरों को छोड़कर सिर्फ ब्रह्म रूपी शब्द में 'अजपा जाप' द्वारा स्वयं को लीन कर देता है। इसी लिए भक्त-जन मानते हैं कि प्रभु का नाम ही उनकी आरती है और इस नाम के बिना बाहर के सभी विस्तार झूठे हैं:

नामु तेरो आरती मजनु मुरारे ॥
हरि के नाम बिनु झूठे सगल पासारे ॥
(पन्ना ६९४)

वास्तव में हरि का नाम ही भक्त को इस जगत में उजागर करता है, क्योंकि यह हरि-नाम ही है जो जीव के जन्म-जन्मांतरों के कर्मों के हिसाब को काट देता है। इसी नाम-सिमरन द्वारा भक्त कबीर जी और भक्त नामदेव जी ने मुक्ति प्राप्त की और इसी नाम-सिमरन ने भक्त रविदास जी को भी प्रेम-रंग में रंग दिया:

हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे ॥
हरि सिमरत जन गए निसतरि तरे ॥१॥रहाउ॥
हरि के नाम कबीर उजागर ॥
जनम जनम के काटे कागर ॥१॥
निमत नामदेउ दूधु पीआइआ ॥
तउ जग जनम संकट नही आइआ ॥२॥
जन रविदास राम रंगि राता ॥
इउ गुर परसादि नरक नही जाता ॥
(पन्ना ४८७)

५. गुरु की आवश्यकता : उपर्युक्त चर्चा से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भक्त रविदास जी की भक्ति-भावना नाम-सिमरन पर बल देती है। इस नाम की प्राप्ति, इस नाम का रहस्य, इस नाम की महिमा का ज्ञान गुरु-प्रदत्त मार्गदर्शन से ही प्राप्त होता है। गुरु-प्रदत्त ज्ञान के श्रवण के उपरांत उसके मनन द्वारा जब गुरु-शबद में ध्यान लगाने की विधि शिष्य को आ जाती है तभी उसे परम आनंद की प्राप्ति होती है। भक्त रविदास जी का मानना है कि सभी भ्रमों को त्याग कर केवल गुरु के ज्ञान को ही अपनी साधना का आधार बनाना चाहिए :

रविदास दास उदास तजु भ्रमु तपन तपु गुर गिआन ॥
भगत जन भै हरन परमानंद करहु निदान ॥
(पन्ना ४८६)

६. वैराग्य की भावना : व्यक्ति अपने व्यवहारिक कामों में इतना उलझा रहता है कि उसे परमात्मा याद ही नहीं रहता। उसे यह याद दिलाना आवश्यक है कि यह संसार नाशवान है। जब तक संसार के प्रति एक वैराग्य की भावना व्यक्ति में जागृत नहीं होती तब तक वह नाम-सिमरन की ओर नहीं झुकता। वास्तव में वैराग्य-भावना अर्थात् संसार और उसके सुखों के प्रति विरक्ति अपने आप में एक महत्वपूर्ण साधना है जिससे साधक का मन अपने प्रभु-प्रियतम की ओर आकृष्ट होने लगता है। डॉ. मनमोहन सहगल अपने ग्रंथ 'संत काव्य का दार्शनिक विश्लेषण' पृष्ठ २३७ में लिखते हैं कि

"भक्ति-मार्ग पर चलने वाले जिज्ञासु के लिए बाहरी चेतनाओं और चिंताओं को संयत कर अपने इष्ट की स्मृति में लगाना ही त्याग या बाहरी आकर्षणों के प्रति वैराग्य है।" इस संसार के सुख स्थिर नहीं रहते और न ही यह जीवन। हमारे संगी-साथी एक-एक करके यहां से जा रहे हैं, हमें भी यहां से जाना होगा, मृत्यु हमारी भी प्रतीक्षा कर रही है। यह जीवन और जगत सत्य नहीं है, इसलिए जितनी जल्दी हो सके इस मोह-निद्रा से जीव को जाग जाना चाहिए और अहंकार छोड़कर प्रभु के भजन में लगना चाहिए :

जो दिन आवहि सो दिन जाही ॥
करना कूचु रहनु थिरु नाही ॥
संगु चलत है हम भी चलना ॥
दूरि गवनु सिरि ऊपरि मरना ॥१॥
किआ तू सोइआ जागु इआना ॥
तै जीवनु जगि सचु करि जाना ॥
(पन्ना ७९३)

संसार नश्वर है। उस मुक्तिदाता परमात्मा का नाम जीवन को सदैव जपना चाहिए। बिना हरि-भजन के यह शरीर नष्ट हो जाएगा। दरअसल परमात्मा ही मुक्ति देने वाला है, सब जीवों की माता और पिता है। भक्त रविदास जी हमें प्रेरणा देते हुए कहते हैं कि भगवान के सेवक को जीवित रहते हुए और मरते हुए भी परमात्मा का नाम स्मरण रखना चाहिए। ऐसा करने से उस सेवक का मान सदैव परमानंद में लीन रहता है :

मुकंद मुकंद जपहु संसार ॥
बिनु मुकंदु तनु होइ अउहार ॥
सोई मुकंदु मुकति का दाता ॥
सोई मुकंदु हमरा पित माता ॥
जीवत मुकंदे मरत मुकंदे ॥
ता के सेवक कउ सदा अनंदे ॥ (पन्ना ८७५)

समग्र रूप में कहा जा सकता है कि भक्त रविदास जी की भक्ति-भावना निर्गुण परमात्मा को अपना आधार मानती हुई आत्मानुभूति पर बल देती है। बिना परमपिता का आत्मिक स्पर्श प्राप्त किए उससे अनुराग नहीं हो सकता और इस दिव्य स्पर्श की प्राप्ति सच्चे गुरु द्वारा ही हो सकती है। जब साधक स्वयं को गुरु-चरणों में अर्पित कर देता है तो उसको प्रभु से नाम की दात मिलती है। जैसे-जैसे जीव में वैराग्य की वृद्धि होती है वैसे-वैसे मन केवल अपने प्रभु-पति के चरणों में लीन होता जाता है।

अनुरोध

'गुरमति ज्ञान' सिक्ख इतिहास तथा गुरबाणी में दर्ज शिक्षाओं द्वारा मानव समाज का मार्गदर्शन करती धार्मिक पत्रिका है। गुरबाणी के सम्मान को मुख्य रखते हुए 'गुरमति ज्ञान' के पाठक साहिबान से अनुरोध है कि वे 'गुरमति ज्ञान' को पढ़ने के बाद इसे न तो रद्दी में बेचें तथा न ही ऐसी जगह पर रखें जहां इसकी उचित संभाल न हो सके। पत्रिका को यदि घर में संभालकर रखने की उचित व्यवस्था न हो तो पढ़ने के बाद इसे किसी मित्र, रिश्तेदार आदि को दे दें अथवा किसी गुरुद्वारा साहिबान या पुस्तकालय में पहुंचा दें। -संपादक।

परोपकारी सिक्ख विरसे की लासानी दास्तां : बड़ा घल्लूघारा

*-प्रो सुरिंदर कौर**

सिक्ख इतिहास का सबसे घातक व प्रचंड युद्ध, जो 'बड़ा घल्लूघारा' के नाम से विख्यात है, फरवरी, २०१२ में इसके ढाई सौ वर्ष पूरे हो गए हैं। युद्ध लड़ना हारने या जीतने का ही परिणाम होते हैं, परंतु इतिहास में कुछ युद्ध हार-जीत से परे अस्तित्व के लिए भी लड़े जाते रहे हैं। कुछ युद्ध परमार्थ के लिए लड़े गए हैं और कभी-कभी युद्ध थोपे भी गए हैं। ऐसे थोपे हुए युद्ध हमेशा ही किसी न किसी अहंकारी व्यक्ति की अंधी नीतियों और दिशाहीन महत्वाकांक्षा का परिणाम होते हैं। संसार के इतिहास में ऐसे अहंकारियों की कमी नहीं है। जहां इतिहास इनकी 'हउमै' द्वारा उपजी क्रूरता, वहशीपन और अत्याचार का साक्षी है वहीं निष्पक्ष होकर भविष्य को उनके सर्वनाश का वृत्तांत भी सुना रहा है। भाई साहिब भाई गुरदास जी सिक्ख साहित्य के मूर्धन्य विद्वान और श्रेष्ठ इतिहासकारों में से एक हैं। उन्होंने बड़ी ही सरल शैली में संसार के इन अहंकारियों के सैकड़ों वर्षों के इतिहास को कुछ शब्दों में समेटकर इस प्रकार प्रस्तुत किया है :

लख दुरयोधन कंस लख लख दैत लड़ंदे।
लख रावण कुंभकरण लख लख राकस मंदे।
परसराम लख सहंसबाहु करि खुदी खहंदे।
हरनाकस बहु हरणाकसा नरसिंघ बुकंदे।
लख करोध विरोध लख लख वैरु करंदे।
गुरु सिख पोहि न सकई साधसंगि मिलंदे ॥
(वार ३८:३)

जहां भाई साहिब इन अहंकारी योद्धाओं का वर्णन करते हैं वहीं वे यह भी बता रहे हैं कि सच्चा गुरसिक्ख सदा सतिसंग के सानिध्य में रहता है इसलिए उसे अहंकार छू भी नहीं सकता। वह व्यर्थ में युद्ध नहीं करता, परंतु एक सच्चा गुरसिक्ख कायर भी नहीं है। वह अहंकारवश होकर किसी पर आक्रमण नहीं करता, पर किसी अहंकारी के आक्रमण पर चुप भी नहीं बैठता, मुंहतोड़ जवाब देता है। अन्याय का विरोध करने की सामर्थ्य सिक्खों को जन्म-घुट्टी में मिलती है। वे स्वयं चाहे कितने भी कठोर हालातों में रहें पर वक्त पड़ने पर बड़े से बड़े जालिम से टकराने से भी नहीं डरते, कभी युद्ध-भूमि में जाकर पीठ नहीं दिखाते। सिक्खों का जीवन फलसफा ही यह है :

लूणु साहिब दा खाइ कै रण अंदरि लड़ि मरै सु जापै।
सिर वढै हथीआरु करि वरीआमा वरिआमु सिञापै। (वार ३०:१४)

सिक्ख देश-धर्म पर अपना सब कुछ कुर्बान कर देते हैं। यह तो सिक्खों के लिए कहावत ही बन गई है कि "वे तेगों की छांव तले पलते हैं।" पंजाब की धरती हर पचास-सौ साल में युद्ध के मैदान में बदलती रही है। देश की सरहद होने के कारण पंजाब और पंजाब के सिक्ख हर विदेशी हमलावर के सामने सीना तानकर उसे रोकने के लिए तत्पर रहे हैं। पूरे देश को सुरक्षित रखने के लिए हर बार पंजाब

R.No. 2, Banta Singh Chawl, Opp. Manish Park, Jija Mata Marg, Pump House, Andheri (E), Mumbai-400093

की धरती लहू से सराबोर हुई है। इसी परोपकारी भावना का निर्वाह करते हुए सिक्खों ने अपने इतिहास के सबसे घातक युद्ध 'बड़े घल्लूघारे' का सामना किया, जो एक अहंकारी, लुटेरे, हमलावर अहमद शाह अब्दाली के कारण सिक्खों पर थोपा गया था।

जहां यह युद्ध सिक्ख इतिहास का सबसे बड़ा खूनी साका है वहीं यह युद्ध सिक्खों के अटूट और बेखौफ हौसलों का साक्षी बनकर देश को स्वाभिमान का नया पाठ भी पढ़ा रहा है। यह साका दुनिया के इतिहास को और विशेषत: भारत के इतिहास को यह बता रहा है कि किस तरह इस देश की इज्जत-आबरू की रक्षा का मूल्य सिक्ख कौम ने अपने लहू का सागर बहा कर चुकाया था। यह वो दिन था जिस दिन, एक ही दिन में लगभग ३०-३५ हजार सिक्खों (उस समय की मौजूदा आधी सिक्ख कौम) को अब्दाली ने एक ही दिन में शहीद कर दिया था। इनका कसूर क्या था, भारत की असहाय अबलाओं की आबरू की रक्षा करना? सिक्ख कौम अपने इस दायित्व को कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी निभाती रही है। ऐसे महान गुरसिक्खों, जिन्होंने सतिगुरु के प्रेम में अपने जीवन तक को न्यौछावर कर दिया, उनके लिए श्री गुरु अरजन देव जी कहते हैं :

आपि मुकतु मुकतु करै संसारु ॥
नानक तिसु जन कउ सदा नमसकारु ॥

(पन्ना २९५)

ऐसे महान गुरसिक्खों के अथक परिश्रम को कौम में सदा जीवित रखने के लिए, आने वाली पीढ़ियों के लिए एक पथ-प्रदर्शक, प्रकाश-स्तंभ बनाने के लिए पंथ ने रोजाना की अरदास में इन शहादतों को विशेष स्थान दिया है। गुरु साहिबान, पांच प्यारों, चार साहिबजादों को याद करने के बाद हम जितनी भी शहादतों का स्मरण करते हैं वे सभी शहादतें उन ८०-८५ वर्षों में हुई हैं जिस समय कलगीधर पिता पंथ को सदा के लिए दैहिक रूप से छोड़ चले गए थे और इस समय से लेकर तब तक जब तक महाराजा रणजीत सिंघ ने राज्य स्थापित नहीं किया था। उस काल में पंथ ने जितना आक्रमणकारियों का सामना किया, जितने उतार-चढ़ाव देखे और जितना लहू बहाया उसका सिक्ख इतिहास में अन्य उदाहरण मिल पाना कठिन है। इतिहास इस बात का भी साक्षी है कि गुरु साहिबान के बाद से लेकर आज तक के समय में सब्र और धैर्य के साथ जिन शिखरों को इन महान गुरसिक्खों ने छुआ, जिन कठिन परिस्थितियों में ये मरजीवड़े अडोल रहे, उसकी दूसरी मिसाल मिल पाना असंभव है। इस दौर में कई-कई बार सिक्ख धर्म को गैरकानूनी घोषित कर दिया गया, कई बार सिक्खों का सामूहिक नरसंहार हुआ, यहां तक कि सिक्खों के सिरों के दाम तक लगा दिए गए। देश के हर गली-कूचे पर गश्ती फौजें सरेआम सिक्खों का शिकार करती फिरतीं। बड़ा घल्लूघारा ऐसे ही विकट काल की सबसे दुखदायी घटना है। इस घटना को समझने के लिए हमें समसामयिक हालातों को समझना होगा।

उस समय देश के केंद्र दिल्ली में मुगलों का राज्य था, पर औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल राज्य अपनी साख गंवा बैठा और नाम-मात्र का ही केंद्रीय राज्य रह गया था। वास्तव में भारत के मध्यकालीन समय में एक बड़े साम्राज्य के स्थान पर छोटे-छोटे राज्यों का ही बोलबाला रहा है और इनमें से अनेक तो अपनी सारी शक्ति आपस में लड़ने-भिड़ने में ही नष्ट

कर देते थे। स्वार्थ, ईर्ष्या और अहंकार से भरे ये राजा, महाराजा व रियासतदानों में अपने घमंड के प्रकटन को लेकर अक्सर खींचतान चलती रहती और वे नित्य ही अपने तथाकथित राज्यों की सीमाओं को बढ़ाने के लिए युद्ध में उलझे रहते। कुछ बेचारे तो अपने राज्यों के अस्तित्व को बचाने के लिए विवशता के कारण ही इसमें फंस गए थे; कइयों ने अपनी राज्य-सत्ता की भूख पर धर्म का आवरण भी चढ़ा लिया था। कुल मिलाकर हम इतना कह सकते हैं कि सारे देश में अराजकता थी, अस्थिरता का वातावरण बना हुआ था, साथ ही उत्तर-पश्चिम की ओर से होने वाले आक्रमणों ने भी बहुत हद तक किसी भी राज्य को स्थिर नहीं रहने दिया था। इन सभी कारणों की चहुंतरफी मार सिक्खों पर पड़ी। वैसे अभी गुरु साहिबान के समय तक किसी ने भी अपना राज्य स्थापित नहीं किया था, परंतु सिक्खों की धन-संपत्ति व रूप-यौवन ने कइयों का ध्यान अपनी ओर खींचा। खालसा के सृजन के बाद श्री अनंदपुर साहिब को केंद्र बनाकर की गई सिक्खों की सैनिक कार्रवाइयां पहले ही पहाड़ी राजाओं से लेकर मुगल दरबार तक की नींद हराम कर चुकी थीं।

गुरु साहिबान के बाद बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने पहली बार सिक्ख राज्य स्थापित किया, परंतु उनकी अनुपम शहादत के बाद पंजाब में जुल्मों की फिर से ऐसी आंधी आई जिसका सामना यहूदियों के बाद दुनिया के इतिहास में केवल सिक्खों ने ही किया है। इस दौरान कई-कई बार सिक्ख धर्म को गैरकानूनी करार दे दिया गया। सरकारी अदेश जारी हो गए कि जहां-जहां कोई केशाधारी नजर आता है बंदी बना लिया जाए; सिक्खों के घर-बार, खेत व अन्य संपत्ति जब्त कर ली जाए। यह बड़ी मुश्किल का दौर था। अठारहवीं सदी के आरंभिक ४०-५० साल इसी हालात में गुजरे थे। सिक्खों ने अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए घर-बार छोड़ दिए, जंगलों, पर्वतों व मरुस्थलों में शरण ली। एक ओर सिक्ख जंगलों में किसी तरह दिन गुजार रहे थे तो दूसरी ओर सिक्खों के सिरों के दाम लगने लगे। जमीन-जायदाद जब्त होने के कारण मजबूरन सिक्खों को अपने परिवारों को भी अपने साथ ही रखना पड़ा।

जरा सोचने की कोशिश करें कि किस तरह उन सिंघों, सिंघणियों, बच्चों, बुजुर्गों ने खुले आसमान तले पल-पल पीछा करती मौत का सामना करते हुए दिन काटे होंगे! मेहनतकश, गरीब व कठोर रोजगार वाले सिंघों-सिंघणियों ने तो जैसे-तैसे अपने आप को हालात के अनुसार ढाल लिया, पर ऊंचे घराने के सिक्खों के लिए यह बड़े संकट का दौर था। जिनके अपने कारोबार थे, दुकानें थीं, नौकर-चाकर थे, जिन सिंघणियों ने अपनी कोठियों के बाहर की गलियां भी कभी अकेले पार नहीं की थीं, आज वे सब अपने धर्म की रक्षा के लिए इन बीआबान कंटीले जंगलों में रहने के लिए विवश थे। सिर पर छत के स्थान पर आग-पाला बरसाता खुला आकाश था; न जमीन, न कोई बिछौना, न ठंडी ठिठुरती हवाओं को रोकने के लिए कोई दीवार या कनात थी; न कोई रोजी-रोटी का साधन, न अपने भाई-बंधुओं के कुशल-क्षेम का कोई समाचार, न दो वक्त की रोटी, न तन पर कोई ढंग का कपड़ा और इस पर यदि कोई घायल या बीमार हो जाए तो कोई उपचार नहीं। यह अति कठिन समय था। दूसरी ओर गश्ती फौजें चप्पे-चप्पे पर खालसे का सुराग

ढूंढती फिरतीं। पत्ता-पत्ता सिक्खों का वैरी हो गया था। सिक्खों ने भी अपने आप को छोटे-छोटे दलों में बांट लिया और भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में फैल गए। कइयों ने बीकानेर के मरुस्थलों का रुख किया, कई शिवालिक के पर्वतीय क्षेत्रों की ओर निकल गए, फिर भी सिक्खों की मुख्य तादाद श्री अमृतसर व लाहौर के मध्य भाग में, काहनूवान (जिला गुरदासपुर) के जंगलों में छिप गई। यह उस समय बड़ा घना कंटीला इलाका था जिसमें एक आम व्यक्ति दिन के उजाले में भी पैर रखना उचित नहीं समझता था। जहां अच्छे से अच्छा कद्दावर सैनिक भी अंदर जाने से कतराता था, वही काहनूवान के जंगल वर्षों तक सिक्खों की शरणस्थली बने रहे।

सिक्ख सब कुछ अकाल पुरख वाहिगुरु की आज्ञा के समक्ष नत्मस्तक होकर सहते रहे परंतु इतने विकट हालातों में भी उन्होंने अपने कर्त्तव्यों की अवहेलना नहीं की। स्वयं अत्याचार का शिकार होने के बावजूद अन्य शोषितों की सहायता 'दल खालसा' सदा करता रहा था। इसी तरह नादिर शाह के आक्रमण के समय सिक्खों ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर सैकड़ों अबलाओं को छुड़ाकर देश की लाज बचायी थी।

नादिर शाह के बाद अहमद शाह अब्दाली अफगानिस्तान का शासक बना। भारत की धन-संपत्ति व रूप सदा उसे अपनी ओर आकर्षिक करते रहते, जिसे प्राप्त करने के लिए अब्दाली ने सन् १७४८ से लेकर १७६१ ई तक पांच बार इस देश पर आक्रमण किया। पंजाब चूंकि बिलकुल सीमावर्ती राज्य है और दूसरी ओर धन एवं सौंदर्य से मालामाल भी, इसलिए पंजाब को उसने अपना खास निशाना बनाया।

सन् १७६० तक मराठे लगभग सारे देश पर हावी हो चुके थे, यहां तक कि दिल्ली में मुगल शाह आलम को भी उन्होंने ही तख़्त पर बिठाया था। अटक दरिया के उत्तरी छोर तक वे कर वसूला करते थे। बहुत हद तक उन्होंने सीमाओं को सुरक्षित भी करने का प्रयास किया था। सन् १७५० से लेकर १७६० ई तक के दस साल सिक्खों के लिए भी कुछ ठीक-ठाक ही रहे थे। मुगलों की ताकत घटने के साथ ही सिक्खों ने फिर जोर पकड़ना शुरू कर दिया और धीरे-धीरे नगरों में बसना भी आरंभ कर दिया।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि देश में आपसी फूट सिर चढ़कर बोल रही थी। भरतपुर के राजपूत राजा सूरजमल के लिए मराठों को कर देने वाली बात असहनीय हो रही थी। सबसे अधिक विरोध किया रोहिलखंड के शासक नजीब ख़ान ने। यदि मराठे कर वसूल रहे थे तो वे जनता की सुरक्षा का उत्तरदायित्व भी निभा रहे थे, परंतु इस देश में जयचंद जैसे गद्दारों की कमी नहीं है। नजीब ख़ान भी ऐसे ही गद्दारों में से एक था। उसने मराठों के विरुद्ध चढ़ाई करने के लिए अब्दाली को निमंत्रण भेज दिया। सन् १७६१ में पानीपत के मैदान में अब्दाली व मराठों में घमासान युद्ध हुआ। इस युद्ध में मराठों को भीषण पराजय का सामना करना पड़ा और उनका सेनापति सदाशिव राव भाउ मारा गया। यह अब्दाली का पांचवा हमला था जो केवल मराठों के विरुद्ध था। सिक्खों का इस युद्ध से कोई सीधा संबंध नहीं था। मराठों की हार के बाद तीन चार महीने यहीं रहकर अब्दाली ने लूटमार की और आगे उत्तर प्रदेश तक के क्षेत्रों को भी लूटा व आतंकित किया। २० मार्च, १७६१ ई को अब्दाली ने दिल्ली में पड़ाव डाला।

इस बार अब्दाली के खेमे में हज़ारों बंदी थे, जिनमें २२०० सुंदर अविवाहित व नवविवाहित हिंदू स्त्रियां भी थीं। इतिहास साक्षी है कि इन अबलाओं की करुण पुकार किसी तथाकथित सूरमे ने नहीं सुनी। उस समय बेशक मराठों को पराजय का सामना करना पड़ा, मगर उन्होंने सिर झुकाने के स्थान पर सिर ऊंचा करके मुकाबला करने का साहस तो किया। आश्चर्य की बात है कि बाकी सारा देश क्या कर रहा था? उस समय क्यों किसी और ने इन मासूमों की इस करुण पुकार को नहीं सुना? सभी अपने आप को बचाने और अब्दाली को खुश करने में लगे थे।

जब किसी ओर से कोई सहायता नहीं मिली तो १० अप्रैल, १७६१ ई को वैसाखी के अवसर पर हिंदुओं के धार्मिक व सामाजिक नेताओं ने श्री अमृतसर पहुंचकर खालसे की शरण में विनती की। सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालीआ उस समय दल खालसा के सरदार थे। उन्होंने इस विपत्ति को पूर्णत: समझते हुए सहायता करने का निर्णय लिया। अब्दाली की सेना के साथ सीधे टकराव का तो प्रश्न ही नहीं उठता था, इसलिए कुछ चुनिंदा सिंघ सरदारों को साथ लेकर स. जस्सा सिंघ गोइंदवाल के निकट ब्यास नदी के तट पर पहुंच गए। जिस समय अब्दाली की सेना ब्यास पार कर रही थी सिक्खों ने अचानक ही उस पर हल्ला बोल दिया और युवतियों को छुड़ा लिया। जत्थेदार साहिब ने इन सभी लड़कियों को ससम्मान उनके घरों तक पहुंचाने का विशेष उपक्रम किया। जिन लड़कियों को उनके परिवारों ने स्वीकार नहीं किया उन्होंने सिक्ख दलों में रहकर अपने दिलेर सिक्ख भाइयों की सेवा करने का निर्णय लिया और अमृत-पान कर सिक्ख धर्म को सहर्ष स्वीकार कर लिया।

बेशक अब्दाली को कोई विशेष आर्थिक हानि नहीं हुई थी फिर भी युवतियों व गुलामों को छुड़ाया जाना एक तीखा प्रहार था, जिससे उसका मन क्रोधित हो गया। काबुल लौटता हुआ वह अपने गुप्तचर पंजाब में छोड़ गया। उसने मन ही मन यह निर्णय कर लिया कि अचानक हमला क्या होता है यह मैं सिक्खों को जरूर दिखाऊंगा। इस प्रकार हिंदुओं की बहू-बेटियों की आबरू बचाने का बदला उसने तीस हज़ार सिक्खों को शहीद करके लिया।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि अपनों के साथ गद्दारी करना भी इस देश के कई आदमियों के खून में फैल चुका था। जंडिआला (जिला श्री अमृतसर) का महंत आकुल दास अपनी ही कौम की बहू-बेटियों की रक्षा करने वाले सिक्खों के खिलाफ अब्दाली के लिए गुप्तचरी करता रहा। उसी साल २७ अक्तूबर, १७६१ ई के बंदीछोड़ दिवस (दीवाली) पर खालसे ने अपने विरोधियों के बारे में ठोस रणनीति बनाई; साथ ही महंत आकुल दास को भी दरबार खालसा में उपस्थित होने का आदेश दिया, परंतु उसने पेश होने के स्थान पर अब्दाली को सिक्खों पर आक्रमण करने का न्यौता भेज दिया जो स्वयं ऐसे ही अवसर की खोज में था। उसने बुलावे पर अमल किया और हिंदोस्तान पर अपना छठा आक्रमण कर दिया जो केवल सिक्खों के विरुद्ध था।

सिक्खों को भी इसकी भनक लग चुकी थी, इसलिए सिक्खों ने पहले अपने परिवारों को सतलुज के पार ले जाकर सुरक्षित करने का निर्णय लिया, क्योंकि दल में बड़ी भारी तादात में सिंघणियां, बच्चे व बुजुर्ग मौजूद थे। ३ फरवरी, १७६२ ई को अब्दाली की सेना लाहौर

पहुंच गई। सिक्खों ने हालात के अनुसार यह अनुमान लगाया कि वह अगले पांच-सात दिनों तक ही यहां पहुंच सकेगा। यही अनुमान उनके लिए सबसे घातक सिद्ध हुआ। यह बात वाकई हैरान कर देने वाली है कि केवल दो दिनों में अब्दाली और उसकी सेना ने लाहौर से मलेरकोटला तक का सफर बड़ी फुर्ती से तय किया और वे ५ फरवरी, १७६२ ई के दिन सतलुज के तट पर स्थित कुप्प रुहीड़ा नामक स्थान पर सिक्खों पर टूट पड़े। अब सिक्खों की भी समझ में आ गया कि शत्रु ने आक्रमण कर दिया है। सभी युद्ध के लिए डटकर खड़े हो गए। यह हमला मुंह-अंधेरे सुबह ४.३०-५.०० बजे के आस-पास अचानक हुआ था, इसलिए सिक्खों को कोई योजना बनाने का समय ही नहीं मिला। किसी का अभी स्नान बाकी था, कोई पाठ कर रहा था, कोई घोड़ों को चारा-पानी डाल रहा था। सारे काम बीच में ही छोड़ दिए गए। बेशक हमला अचानक ही हुआ था फिर भी सिक्खों ने मैदान छोड़ने के स्थान पर डटकर मुकाबला करने की ठानी। परिवार भी साथ होने के कारण पहले ही हमले में सैकड़ों सिक्ख शहीद हो गए। किसी तरह मुखी सिंघों ने सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालीआ के साथ मिलकर एक अस्थायी योजना बनाई और दल के आस-पास फौजी सिक्खों की दीवार-सी बना ली। बीच में स्त्रियों, बच्चों व बुजुर्गों को रखकर बचाने का यत्न किया गया; साथ ही अगली पंक्तियों में लड़ते हुए बरनाला नगर की ओर बढ़ना आरंभ किया।

आगे-आगे सरदार शाम सिंघ थे और अहमदगढ़ वाली दिशा में सरदार जस्सा सिंघ स्वयं थे। मलेरकोटला की तरफ के सिक्ख सरदार चढ़त सिंघ की कमान में लड़ रहे थे। अब सिंघों ने भी बड़ी वीरता के जौहर दिखाने शुरू कर दिए जिससे यह घमसान दोतरफा हो गया। हर ओर एक भगदड़-सी मच गई। अब्दाली के सेनापति हर ओर से प्रयास कर रहे थे कि वे खालसे की पहली कतार को तोड़कर बीच में जाकर न लड़ने वाले सिक्खों को मार सकें, जिनमें जैन ख़ान सबसे आगे था। सिक्ख जान की बाजी लगाकर लड़ रहे थे, परंतु फिर भी पीछे हटते हुए उनका बहुत अधिक जानी नुकसान हो रहा था। सिक्खों ने अपने गुरु साहिबान को याद किया। गुरबाणी की पंक्तियों को अपनी रसना से उच्चारण करते हुए वे 'बोले सो निहाल, सति श्री अकाल' के जैकारे बुलंद करते रहे। उस समय केवल एक चढ़दी कला की भावना ही काम कर रही थी। सिंघ सरदार बार-बार कलगीधर पिता के यह शब्द अपनी हिम्मत बनाए रखने के लिए गा रहे थे:

न डरों अरि सो जब जाइ लरों निसचै करि
अपनी जीत करों ॥

दो मील तक सिक्ख बहुत जोश से लड़ते हुए शत्रुओं के टुकड़े-टुकड़े करते हुए राह बनाते रहे। थोड़े समय में हर ओर लहू ही लहू दिखाई दे रहा था। अब्दाली की सेना का भी बहुत जानी नुकसान हुआ और सिक्खों का भी। सिक्ख योद्धाओं की गिनती से शत्रु योद्धाओं की तादात बहुत ज्यादा थी। लड़ने के अलावा और कोई रास्ता अब्दाली ने सिक्खों के लिए बाकी नहीं छोड़ा था। सिंघों ने भी घिरकर कत्ल हो जाने से जूझ कर शहीद होना बेहतर समझा। लड़ने वालों में अब १३-१४ साल के बच्चे भी सम्मिलित होने लगे। कई सिंघणियों ने भी आगे बढ़कर वीरता के जौहर दिखाए तथा कई शत्रुओं को मौत के घाट उतार दिया। कुछ सिक्खों ने पानी पिलाने, घायलों को संभालने व भारी

सामान उठाकर साथ चलने की सेवा संभाली। घायलों की मरहम-पट्टी की मुख्य जिम्मेदारी सिंघणियों ने संभाली जिससे अधिक से अधिक सिक्ख युद्ध के लिए तत्पर हो सकें। कुछ सिक्खों ने एक खास सेवा संभाली जो थी मारे गए अफगानियों के शस्त्र जमा करके खालसाई फौज को देना, जिससे युद्ध जारी रह सके, क्योंकि सिक्खों के पास शस्त्र और गोला-बारूद लगभग समाप्त हो चुके थे।

सिक्खों के जोश और युद्ध के पैंतरे देख कर अब्दाली हक्का-बक्का रहा गया। अपने गुप्तचरों से उसने सिक्खों के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था, पर यह पहला अवसर था जब वह सिक्खों से आमने-सामने लड़ रहा था। अब अपने अहिलकारों से सिक्खों की प्रशंसा सुनते ही वह जलकर कोयला हो गया और उसने अंतर्मन यह निर्णय कर लिया कि वह सिक्खों का समूल नाश करके ही दम लेगा। उसने अपने सिपहसालार वली ख़ान, भीखन ख़ान व जैन ख़ान को और अधिक शक्ति (सेना) लेकर लड़ने का आदेश दिया। उन्होंने तीनों ओर से बड़े भारी दसते को लेकर एक साथ हमला बोल दिया। सिक्खों की तादाद कम होने के कारण वे इस हमले को सहार न सके और हज़ारों की गिनती में शहीद हो गए। इस प्रकार से सिक्ख योद्धाओं द्वारा बनाई गई रक्षा-पंक्ति भी टूट गई और अंदरूनी दल को बहुत अधिक जानी नुकसान पहुंचा। अब्दाली ने मन बना लिया था कि दल के ऐन बीच पहुंच कर ऐसा करारा प्रहार किया जाए जिससे सिक्ख दोबारा उठ न सकें।

सिंघ सरदारों ने अब होशियारी और हिम्मत से काम लेते हुए अपने आप को संभाला। वे अब्दाली के नापाक इरादों को रोकने के लिए डट गए। फिर एक बार दोनों ओर से तेज घमसान मच गई। सारी धरती लहू से भीग गई थी। युद्ध का मैदान हर पल एक नया ही रूप धारण करता जा रहा था। इस प्रकार से लड़ते हुए रात होने तक सिक्ख लगभग बीस मील का सफर तय कर चुके थे। दूसरी तरफ अब्दाली के सिपाही, जिन्होंने पहले लगातार १५० मील की यात्रा की थी और अब पिछले दस घंटों से लड़ रहे थे, थक कर चूर हो चुके थे। अंत में सूरज ढलते ही दोनों पक्षों की ओर से युद्ध बंद हो गया और दोनों ही सतलुज के जल से अपनी प्यास बुझाने लगे।

इतिहास के अनुसार इस युद्ध में लगभग तीस हज़ार सिंघ, सिंघणियां व बच्चे शहीद हो गए, उस समय की लगभग आधी कौम। एक दिन में खालसे का इससे अधिक जानी नुकसान पहले कभी नहीं हुआ था। एक तरफ अब्दाली सिक्खों का नामोनिशान न मिटा सकने के कारण बौखलाया हुआ था, क्योंकि सिक्ख अभी जीवित थे, जिन्हें वह अपनी आंखों से देख चुका था। इस चिढ़ को उतारने के लिए लौटता हुआ वह श्री हरिमंदर साहिब को पूरी तरह ध्वस्त कर गया और शहीद सिक्खों के सिरों को गाड़ियों में भरकर लाहौर ले गया तथा उनको मुख्य दरवाजों में चिनवा दिया, जिससे आम लोगों के समक्ष वो अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर सके। दूसरी ओर इतने भारी नुकसान के बाद भी खालसे का यह हाल था :

झखड़ि वाउ न डोलई परबतु मेराणु ॥

(पन्ना ९६८)

सिक्ख पिछले ५०-६० वर्षों से ऐसे हालातों का सामना कर रहे थे, इसलिए वे अडिग रहे, टूटे नहीं। वे इसे खालसे के लिए अकाल पुरख वाहिगुरु का एक और खेल, एक और परीक्षा समझकर सह गए। प्रसन्नचित्त होकर ईश्वर की

आज्ञा का पालन सिक्खी जज़्बे का एक अभिन्न अंग है। हर खुशी, हर दुख में सिक्ख अरदास करके परमात्मा का धन्यवाद ही करता है। उसका जीवन-दर्शन ही यह है:

दुखु नाही सभु सुखु ही है रे एकै एकी नेतै ॥
बुरा नही सभु भला ही है रे हार नही सभ जेतै ॥
सोगु नाही सदा हरखी है रे छोडि नाही किछु लेतै ॥
कहु नानक जनु हरि हरि हरि है कत आवै कत रमतै ॥ *(पन्ना १३०२)*

इस जज़्बे का सबूत इस बात से मिल जाता है कि सिक्ख बहुत जल्दी उठ खड़े हुए। प्राचीन पंथ प्रकाश के अनुसार तीन महीने बाद खालसे ने फिर जैन ख़ान पर हमला किया। अब्दाली की अनुपस्थिति में वो इसे संभाल न सका और अमन-चैन बनाए रखने के लिए उसने मुआवजे के रूप में ५०,००० रुपए सिक्खों दो दिए, यह बात और है कि बाहरी शह मिलने से वह फिर अपने पुराने रवैये पर आ गया। इस घल्लूघारे के नौ महीने बाद ही सिक्ख फिर अपने ठिकानों पर आ गए। उसी साल बंदीछोड़ दिवस (दीवाली) पर श्री हरिमंदर साहिब में बड़ा भारी समागम हुआ। जो सिक्ख घूल्लघारे से बच गए थे वे दोबारा प्रचार-कार्य में सरगरम होने लगे। कई गृहस्थी सिक्खों ने भी अब जंगजू सिक्खों के साथ रहना शुरू कर दिया जिससे खालसे की शक्ति और बढ़ सके। पूरे देश से सैकड़ों नौजवान बच्चों ने श्री अमृतसर आकर अमृत-पान किया और पंथ की मुख्य धारा से जुड़ गए। सिक्खों ने अमृत सरोवर की खुदाई करवाई और श्री हरिमंदर साहिब का पुनर्निर्माण करवाया। सिक्खों में अब्दाली के विरुद्ध गुस्सा बरकरार रहा जिसे दल खालसा ने सन् १७६४ में बाबा दीप सिंघ जी के नेतृत्व में लड़े गए युद्ध में जहान ख़ान को मारकर उतारा। इस युद्ध में बाबा दीप सिंघ जी स्वयं भी शहीद हो गए। यह शत्रुओं के लिए स्पष्ट चुनौती थी कि "तुम मारकर भी असफल हो और हम मरकर भी सफल हैं।" इस देश में ऐसे प्रसंग बार-बार सिक्खों के साथ होते रहे हैं। सन् १९८४ को कोई भुला नहीं सकता। गुरदेव पिता की कृपा द्वारा हर बार सिक्खों ने अडोल रहकर वही जवाब दिया जो सन् १७६२ में अब्दाली को दिया था:

सिंघां कदे झुकणा नहीं।
सिंघां कदे मुकणा नहीं।
सिंघां नू झुकाउण वाला,
सिंघां नू मुकाउण वाला,
खिआल इक जुनून है।
कोई जुलम, कोई सितम,
सानूं झुका सकदा नहीं,
सानूं मिटा सकदा नहीं,
किओंकि हाले तां साडीआं रगां विच,
कलगीधर दा खून है।

जहां इस घल्लूघारे ने अत्याचार व अत्याचारी की अति की नई ऊंचाइयों को प्रकट किया वहीं इसने सिक्खों की सहन-शक्ति और गुरु-चरणों पर सब कुछ समर्पित कर देने वाली भावना के लिए एक भयानक कसौटी प्रस्तुत की, जिसमें तप कर सिक्ख कंचन की भांति शुद्ध, निरोल और चमकते हुए बाहर आए, पंथ की छवि और निखर गई। जहां इस घल्लूघारे ने अब्दाली जैसे अहंकारी को सिक्खी सिदक की चट्टान से टकराने का मजा चखाया वहीं यह आने वाले समय के लिए भी एक चेतावनी थी। एक बात अवश्य है कि इस घल्लूघारे ने सिक्खों को ऐसे विकट व कठोर समय में एकजुट होने का अवसर दे दिया जिसने ऐसा कमाल का इतिहास

बनाया। यह युद्ध सिक्ख कौम के लिए भी एक प्रकाश-स्तंभ है जो हमें न केवल भविष्य में भी एकजुट होकर जूझना सिखा रहा है वरन् सुचेत रहने का भी संदेश दे रहा है। महान हैं वे गुरसिक्ख जिन्होंने गुरु के भरोसे न केवल अत्याचारियों के दांत खट्टे किए वरन् अपने बहुमूल्य प्राणों की आहुति देकर सच्चे प्रेम का प्रमाण भी दिया; साथ ही अपनी सूझबूझ से कौम को समूल नाश से भी बचा लिया। धन्य है वो गुरु जिसने चिड़ियों को बाज से लड़वाकर यह चमत्कार कर दिखाया। धन्य है गुरु की बाणी जिसने सिक्खों के तन, मन और आत्मा को फौलाद बना दिया। जहां इस घल्लूघारे में अब्दाली ने कौम को समाप्त कर देने की योजना बनाई थी वहीं गुरु के मरजीवड़े (मरकर भी जिंदा रहने वाले) लालों को सिक्खी के अमिट होने का प्रतीक बना दिया।

चिंता

*-बीबी जसप्रीत कौर 'रावी'**

हम कितनी जल्दी अपना जीवन थकान से भर लेते हैं। किसी भी पदार्थ को प्राप्त करने की हम में कितनी जल्दी होती है। जिस किसी को भी देखो, मानो वह अपने निर्धारित लक्ष्य पर पहुंचने में विलंब कर चुका हो। प्रत्येक व्यक्ति के चेहरे पर जल्दबाजी दिखाई देती है। जिस प्रकार तीव्रता से वर्ष बीतते जाते हैं उसी प्रकार हम भी तीव्र गति से दौड़ते जा रहे हैं। परिणामस्वरूप हमारी रीढ़ की हड्डी झुक गई है, बाल समय से पूर्व सफेद हो गये हैं। बेचैनी और असंतोष इस युग के मनुष्यों की विशेषता बन गया है। हम अपनी रोटी कमाते तो हैं पर उसे पचा नहीं पाते। इस प्रकार हमारी उत्तेजित मांसपेशियां तेजी से दुर्बल होती जा रही हैं। इसके परिणामस्वरूप हमारा स्वभाव चिड़चिड़ा होता जा रहा है, जो सामाजिकता एवं नागरिकता के विरुद्ध है।

बीचर ने कहा है, "इंसान को काम का बोझ नहीं बल्कि उसके प्रति जो चिंता है वो मारती है। कार्य तो स्वास्थ्य कर होता है। किसी मनुष्य पर उसकी शक्ति से अधिक भार नहीं लादा जा सकता। जिस प्रकार तेज धार जंग लगने से कुंठित हो जाती है, उसी प्रकार चिंता से मनुष्य की गति की धार भी जंग खा जाती है। कोई भी यंत्र कार्यरत रहने से नहीं अपितु विघटन से टूटता है।

**मकान नं. ११, सेक्टर १-ए, गुरु ज्ञान विहार, लुधियाना (पंजाब)*

बड़ा घल्लूघारा के प्रति एक अवलोकन

*-डॉ. जसबीर सिंघ**

'घल्लूघारा' शब्द अंग्रेजी के 'Holocaust' का समानार्थी है। यह शब्द असल में यूनानी भाषा के शब्द 'Holocaustrum' से निकला है, जिसके अर्थ हैं -- 'burnt whole.' इस तरह 'घल्लूघारा' के शाब्दिक अर्थ हैं -- "सारा कुछ तबाह या भस्म कर देना।"

सबसे पहले यह शब्द दूसरे विश्व युद्ध के समय अस्तित्व में आया जब नौ लाख यहूदियों में से छः लाख यूरपीन यहूदियों को नाज़ी जर्मनियों ने खत्म कर दिया था। विश्व के इतिहास में ऐसे बहुत-से समय आए जब ऐसे कई खतरनाक घल्लूघारे अस्तित्व में आये।

सिक्ख इतिहास में प्रमुख रूप से तीन घल्लूघारे हुए हैं जब हज़ारों सिंघों को शहीदी-जाम पीने पड़े। पहला सिक्ख घल्लूघारा १७४६ ई. में हुआ जिसमें लगभग १०,००० सिक्ख शहीद हुए। इसको सिक्ख तवारीख में 'छोटा घल्लूघारा' के नाम से याद किया जाता है। दूसरा सिक्ख घल्लूघारा १७६२ ई. में हुआ जिसमें लगभग ३०,००० से ३५,००० तक सिक्ख शहीद हुए। इसको सिक्ख इतिहास में 'बड़ा घल्लूघारा' के नाम से जाना जाता है। तीसरा सिक्ख घल्लूघारा जून १९८४ ई. हुआ।

अहमद शाह दुर्रानी ने जब १७६१ ई. में ख्वाजा मिर्जा जान को पंजाब के लिए नियुक्त किया तो सिक्खों ने उसको जंग में हार ही नहीं दी बल्कि मैदाने-जंग में ही मार दिया। जब अहमद शाह को यह खबर पहुंची तो उसने पंजाब के लिए नूरदीन बामजी को रवाना किया। बामजी ने अभी दरिया चिनाब पार ही किया था कि उसका मुकाबला स. चढ़त सिंघ शुकरचक्कीए के साथ हो गया। बामजी ने मुश्किल से जान बचाकर सियालकोट किले में पनाह ली। जब सिंघों ने किले का घेरा कई दिनों तक न उठाया तो बामजी रात के समय जम्मू की पहाड़ियों की तरफ भाग गया। अफ़गान फौजियों ने सिक्ख सरदार के सामने अपने हथियार फेंक दिये।

लाहौर के ख्वाजा उबैद ख़ान ने जब दुर्रानी जरनैल बामजी के बारे में सुना तो वह आग बबूला हो गया। उसने भारी फौज इकट्ठी करके सिक्खों पर हमला किया, परंतु ख्वाजा की फौज में भर्ती सिक्ख फौजी अपने गुरु-भाइयों के साथ मिल गये। यह देखकर उबैद ख़ान भारी तोपखाना तथा हथियार फेंककर लाहौर की तरफ भाग गया। सिंघों के हौसले बुलंद हो गए तथा विजय उनके कदम चूमने लगी। सिंघों की इस चढ़त ने उनको लाहौर भी दिला दिया। स. जस्सा सिंघ को लाहौर का बादशाह बनाकर 'सुलतान-उल-कौम' के खिताब से निवाजा गया। इस प्रकार सारा पंजाब इंडस से सतलुज तक खालसाई झंडे तले आ गया।

श्री अकाल तख़्त साहिब, श्री अमृतसर में २७ अक्तूबर, १७६१ ई. को खालसा पंथ ने दीवाली वाले दिन गुरमता पास किया कि वे सिक्ख कौम के दुश्मनों, विशेषतः अफ़गानियों के

**मियां मीर नगर, हमदानिया कालोनी-४, बिमिना, श्रीनगर-१९००१८*

प्रतिनिधियों, मुखबिरों तथा सहयोगियों को सजाएं देंगे, जिनका मुख्य अगुआ जंडिआला का निरंजनीया है।

जंडिआला के आकल दास की इत्तिला पर अहमद शाह दुर्रानी पंजाब पर चढ़ाई करने आ गया। वास्तव में अहमद शाह का यह हमला मात्र सिक्खों को नेसतो-नाबूद करने के लिए किया गया था। यह उसी फरमान का दूसरा रंग था, जो १० दिसंबर, १७१० ई को बहादुर शाह बादशाह ने जारी किया था कि "जहां भी (गुरु) नानक (साहिब) के पजारी (सिक्ख) मिलें उन्हें कत्ल कर दिया जाये।"

जनवरी, १७६२ ई में सिंघों ने आकल दास के शहर को घेर लिया था। वो सारे दरवाजे बंद करके कुछ समय तक छिपा रहा। उसने तुरंत अहमद शाह अब्दाली को खबर भेजी। अब्दाली भारी फौज लेकर ३ फरवरी, १७६२ ई को लाहौर पहुंच गया। सिंघों को जब यह खबर मिली तो उन्होंने घेरा उठा लिया तथा समय की नज़ाकत को पहचानते हुए मालवा क्षेत्र की तरफ हो गये। उस समय सिंघों की गिनती चालीस हज़ार थी, जिसमें दस हज़ार महिलाएं, बच्चे तथा बुजुर्ग दल की शक्ल में थे, जिनको सिंघ बीकानेर की तरफ सुरक्षित ले जाना चाहते थे।

सरहिंद के हाकिम जैन ख़ान ने अहमद शाह को पूरी स्थिति की खबर भेजी। अहमद शाह ने जैन ख़ान को हिदायत की कि उसके आने से पहले सिक्खों को पकड़े रखना, सुबह आकर सबको मार देंगे। भाई रतन सिंघ 'श्री गुर पंथ प्रकाश' में बयान करते हैं :

और शाह पै गए हलकारे, सिंघ आए हैं दाइ हमारे।
हम इत वल तिह राखैं घेर, तुम इन मारो होत सवेर ॥२०॥

जैन ख़ान के साथ मलेरकोटला का भीखन ख़ान भी शामिल हो गया। उस समय सिंघों का दल अपनी रफ़्तार से चल रहा था:

बहीर कोस दुइ तिंन गयो तौ आगे परे रिपु और।
जैना अते मलेरीए मारे उन्हैं बहु दौर ॥३६॥
(श्री गुर पंथ प्रकाश, पृष्ठ ४५३)

५ फरवरी, १७६२ ई की सुबह को जंग का मैदान गर्म हुआ। जैन ख़ान के फौजियों की गिनती (तोपखाना) २०,००० थी, जिसने पहला हमला किया। सिंघों ने सोचा भी नहीं था कि अब्दाली जैन ख़ान की मदद के लिए तुरंत आ जायेगा। अब्दाली द्वारा ३०,००० घुड़सवारों को लेकर मैदान में आ जाने से जैन ख़ान के फौजियों के हौसले बुलंद होना स्वाभाविक थे। इस समय अब्दाली सिक्खों से पुराने बदले भी लेना चाहता था, जब सिक्खों ने कई पुराने मौकों पर उस पर हमले किये थे। इस बार अब्दाली बढ़िया तोपखाना लेकर तथा हथियारों से लेस होकर आया था।

स. जस्सा सिंघ तथा स. चढ़त सिंघ ने समय को भांपते हुए अपने सिंघों को हुक्म किया कि तुरंत महिलाओं, बच्चों तथा बुजुर्गों के गिर्द गोल घेरा बना लो तथा बरनाला शहर की तरफ कूच करो। सिंघों का एक ही मकसद था कि खालसा दल को बचाया जाये तथा दुश्मन के साथ लड़ाई करके उसे भारी नुकसान पहुंचाया जाये, परंतु दुश्मन की गिनती लाखों में थी और सिंघ आटे में नमक के समान थे :

तुरक आटा हम लूण सिञापैं।
वहि अंधेरी हम बरोलो सिञापैं।
तुर तुर लरो औ लर लर तुरो।

बहीर बचावन खातर अड़ो ॥५३॥
लड़ैं नठैं खड़ खड़ मुड़ लड़ैं।
बहुते गिलजे कया सिंघ करैं ॥५७॥
जिम कर कुकड़ी बचिअन छुपावै।
फिलाइ पंख दुइ तरफ़ रखावै।
इम खालसे नै बहीर छपायो।
जो बच रहयो सु आगै लगायो ॥१२४॥

जब बड़ा घल्लूघारा हुआ उस समय सारे सिंघ मलेरकोटला से १२ किलोमीटर दूर उत्तर दिशा की तरफ कुप्प रुहीड़ा नामक स्थान पर इकट्ठे थे। सिंघ चाहे इस युद्ध-अभ्यास में सफल हुए परंतु उनका भारी जानी नुकसान हुआ। स. चढ़त सिंघ शुकरचक्कीए की बहादुरी तथा युद्ध-नीति के कारण दल में बहुत सारों को बचा लिया गया। 'श्री गुर पंथ प्रकाश' में इस लड़ाई का चित्रण बाखूबी किया गया है। यह स्रोत पुस्तक इसलिए भी भरोसेयोग्य है क्योंकि इसके लेखक भाई रतन सिंघ के पिता तथा चाचा जी भी इस लड़ाई में शामिल थे। दोनों तरफ से पशु एवं मनुष्य पानी पीने के लिए उतावले थे तथा थकान से चूर हो गये थे। 'पंथ प्रकाश' के अनुसार :

घोड़े मरद पिआसे भए, सबहन के मुख सूक सु गए।
रसते मैं जल हत्थ न आयो, जौ आयौ तौ पीअन कब पायो।
कोस बारां में नहिं जल लब्भा, पीतो दुतरफ़ी चाहै सब्भा।
सभ को जल तहिं नदरी आया, जन मरते किन जीवन पाया ॥३४॥
भरी ढाब बड ढोवै नट्ठ, पयासे परे दुतरफों नट्ठ।
बहीरीए भी चहैं पीओ पानी, परत तलवार न तिन ने मानी ॥१३५॥
गिलजे भी लड़नो भुल गये, पीवन पानी ढाब सु पए।
पयासे विचदों नठ जल पीवैं, भावैं मर डुब भावैं जीवैं ॥१३६॥

शाम के समय बहुत-से सिंघ सही-सलामत बरनाला पहुंच गये। अब्दाली के फौजी भी, जिन्होंने लंबा सफर तय करके इस जंग में हिस्सा लिया था, थक-हार कर वापिस मुड़ गये। सिंघों के जज़्बे को यह घल्लूघारा चढ़दी कला के कलश की तरह प्रदीप्त करता है।

इस जंग में सिक्खों का भारी जानी नुकसान हुआ। इसके बारे में हमारे पास दो ही प्रारंभिक स्रोत हैं। सिक्ख इतिहास में यह गिनती २०,००० से लेकर ५०,००० तक की गई है। पहला स्रोत एक फ़ारसी लिखित 'किसा-ए-थमस-ए-मसकीन' (थमस-नामा) है जो अप्रैल, १७८२ ई को थमस ख़ान ने पूर्ण किया। यह लिखित बड़ी महत्वपूर्ण तथा प्रारंभिक स्रोत है, क्योंकि थमस ख़ान ने इस जंग में खुद हिस्सा लिया था। उसने सिक्खों की चढ़दी कला, तथा युद्ध-नीति, पैंतरेबाजी को अपनी आंखों से देखकर यह भविष्यवाणी की थी कि जल्द ही सिक्ख राज्य कायम हो जायेगा, जो बाद में सच साबित हुआ।

थमस ख़ान ने लिखा है, "यह भरोसेयोग्य है कि लगभग २५,००० सिक्ख मारे गये थे।" यह एक गैर-सिक्ख की लिखित थी।

दूसरा स्रोत सिक्ख इतिहासकार स. रतन सिंघ द्वारा लिखित 'श्री गुर पंथ प्रकाश' है जो १८४१ ई की कृति है। इस लिखित में शहीदों की गिनती तीस हज़ार बताई गई है। आम लोगों में यह विचार था कि सिंघ पूरे एक लाख थे जिसमें से पचास हज़ार मारे गये तथा पचास हज़ार बच गये :

लोक कहैं सिंघ इक लख सारा,

पचास बचयो और सभ गयो मारा।
पिता हमारे तीस बताए,
रहे सु मर और बच कर आए।
पिता चाचे दुइ हम थे साथ,
उन ते सुन हम आखी बात ॥१४४॥

इस जंग में स. जस्सा सिंघ आहलूवालीआ के शरीर पर २२ जख़्म आये जबकि स. चढ़त सिंघ शुकरचक्कीये को १० जख़्म आये। इन जख़्मों से प्रत्यक्ष है कि सारे सिक्ख जरनैलों ने लड़ाई अपने तन पर झेली। यह ऐसी लड़ाई थी जिसमें हर सिक्ख लड़ाकू को कोई न कोई जख़्म आया था। चाहे इस लड़ाई में बहुत सारे सिंघ शहीद हो चुके थे, फिर भी सिंघों में चढ़दी कला वाली स्प्रिट खत्म नहीं थी हुई। लड़ाई की शाम को एक निहंग सिंघ ने सभी को आवाज दी :
तत्त खालसो सो रहयो गयो सु खोट गवाइ॥१४६॥
(प्रचीन पंथ प्रकाश)

इस घल्लूघारे में सिंघों ने वही युद्ध-नीति अपनाई जो उन्होंने छोटे घल्लूघारे के समय अपनाई थी। सिंघ दुश्मनों की चाल से पूरी तरह से वाकिफ़ थे। वे सिंघों को नेसतो-नाबूद करना चाहते थे। इस घल्लूघारे में दुश्मन जानें बचाकर लड़ते थे जबकि सिंघ जानें वारकर "अति ही रण मैं तब जूझ मरों" के अनुकूल मैदाने-जंग में जूझ रहे थे। सिंघ श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा दर्शाये मार्ग पर चट्टान की भांति अडिग रहे। सिंघों के जोश तथा धैर्य में कोई फर्क न आया; स्वाभिमान तथा गैरत की आभा चमकती रही।

इतिहास में जिक्र आता है कि इस घल्लूघारे में दमदमा साहिब वाली श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बीड़ सिक्खों के हाथों से चली गई। भाई कान्ह सिंघ नाभा लिखते हैं, "यह दमदमे वाली बीड़ (श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी) संवत् १८१८ में कुप्प रुहीड़ा की जंग 'बड़े घल्लूघारे' में खालसा दल के हाथों से जाती रही, परंतु इसके पहले इसकी प्रतिलिपियां हो चुकी थीं।

'सिंह' के बदले 'सिंघ' लिखा जाए!

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी में लेखन-कार्य से जुड़े व्यक्तियों को चाहिए कि वे जन-जागरण अभियान छेड़ें। हिंदी पत्रकारिता और साहित्य में 'सिंघ' को 'सिंह' लिखा जाता है। यह गुस्ताखी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के नाम के साथ भी समान रूप में की जाती है। हिंदी विद्वानों के इस दुराग्रह को तोड़ने में अब और देरी नहीं करनी चाहिए। आप अपने समस्त प्रकाशनों के माध्यम से अभियान शुरू करें। याद रहे, कुछ सिक्ख विद्वान भी 'सिंह' लिखने का एतराज नहीं करते। ऐसे विद्वानों को आपका प्रकाशन विभाग समझा सकता है। 'सिंघ इज़ किंग' एक मुहावरा बन चुका है। हिंदी पत्रकारिता पंजाबी-अंग्रेजी के खिचड़ी मुहावरे को 'सिंह इज़ किंग' लिख कर अपनी गलती का परिचय देने में शान समझती है।

-स. करतार सिंघ नीलधारी
चंडीगढ़, मो. ९४१७१-४३३६०

शहीदी साका श्री ननकाणा साहिब

*-स. साधू सिंघ मसताना**

'गुरुद्वारे' सिक्ख धर्म के प्रचार के बड़े केंद्र माने जाते हैं। इनसे श्रद्धालुओं को आत्मिक जीवन प्राप्त होता है। महाराजा रणजीत सिंघ के राज्य के समय कई ऐतिहासिक गुरुद्वारों के नाम काफ़ी बड़ी जायदादें लगाई गई थीं। उनमें से एक ऐतिहासिक गुरुद्वारा जन्म-स्थान श्री गुरु नानक देव जी श्री ननकाणा साहिब भी है, जिसके नाम कई हज़ार बीघा जमीन लगी हुई थी। कुछ समय पाकर इस पर कब्जा महंत नरैण दास तथा उसके दल का हो गया। यह खुद बदमाश, शराबी-कबाबी तथा कुकर्मी था। वो हर समय मोल खरीदे गुंडे अपने साथ रखता था। पावन गुरु-स्थान को उसने बदमाशी का अड्डा बना रखा था।

देखना यह है कि गुरु-घरों पर इन महंतों का कब्जा कैसे हुआ? यह ख़्याल किया जा सकता है कि वक्त की हकूमत के जब सिक्खों पर जुल्म हुए तथा भीड़ बनी, सिक्खों के सिरों के मूल्य पड़ते गये, उस कठिन समय में सिंघों को अपने घर-बार छोड़कर घोड़ों की काठियों पर ही अपने घर बनाने पड़े। उस समय गुरु-घर की सेवा-संभाल का काम महंतों, उदासियों एवं निरमले साधुओं के हाथ में आया, जिनको जनसाधारण ने नेक एवं रब के भय में रहने वाले ख़्याल कर रखा था। क्या पता था कि मुफ्त की कमाई ने इनके दिमाग बिगाड़ देने हैं तथा इन्हें गलत रास्ते पर डाल देना है। इन्होंने गुरु-घरों का सत्कार करना बिलकुल ही भुला दिया था। कई गुरु-घरों की जमीन बेचकर इन लोगों ने हड़प कर ली थी। तभी तो महंतों की गुंडागर्दी न सहारते हुए सिंघों ने जत्थेबंद होकर कई गुरु-घरों पर कब्जा भी किया। सितंबर, १९२० ई में दिल्ली के गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब का मोर्चा फतह किया। ६ अक्तूबर, १९२० ई को गुरुद्वारा बाबे दी बेर, सियालकोट पर कब्जा किया तथा वहां के महंत गंडा सिंह को भगाया। १२ अक्तूबर, १९२० ई को श्री अकाल तख़्त साहिब, श्री अमृतसर पर स. तेजा सिंघ भुच्चर की जत्थेदारी तले सिंघों का कब्जा हुआ। १८ नवंबर, १९२० ई को गुरुद्वारा पंजा साहिब पर कब्जा किया। २० जनवरी, १९२१ ई को श्री दरबार साहिब, तरनतारन का प्रबंध भी सिंघों के हाथ में आया। अब सिंघों के लिए श्री ननकाणा साहिब के महंत नरैण दास की नब्ज पहचाननी जरूरी थी। यह अपने आप को बड़ा बदमाश समझता था।

महंत नरैण दास ने कुकर्म तो बहुत किये परंतु दो घटनायें आम लोगों की नजर में आईं। एक तो यह थी कि एक (सिंधी) व्यक्ति की नाबालिग लड़की के साथ महंत के आदमियों ने अभद्र व्यवहार किया। दूसरा, जिला लायलपुर की छः महिलाओं, जो पावन गुरु-घर पर श्रद्धा-सुमन भेंट करने आई थीं, के साथ पापी नरैण दास तथा उसके कारिंदों ने कुकर्म किया। इन वारदातों का पता जब शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी को चला तो उसने श्री ननकाणा साहिब

**1736, Ash Court, Livingston, CA 95334, U.S.A.*

पर कब्जा करने हेतु लंबी विचार की। कई बार सिक्ख नेताओं की एकत्रताएं अलग-अलग जगहों पर हुईं। १९२१ ई की १४ फरवरी को शेखूपुरा तथा १५ फरवरी को लाहौर में स. करतार सिंघ झब्बर एवं स. बूटा सिंघ वकील की आपसी चर्चा हुई। उस समय महंत नरैण दास ने भी हाजिर होना था, किंतु वो न आया। वो अंदरखाते सिंघों का दुश्मन था, मगर बाहर से जी-हजूरी प्रकट करता रहा। वो दिल का खोटा एवं मक्कार था। १७ फरवरी को खरे सौदे के गुरुद्वारे (गुरुद्वारा सच्चा सौदा) में एक एकत्रता हुई जिसमें यह फैसला किया कि स. बूटा सिंघ जत्था लेकर १९ फरवरी की सवेर को श्री ननकाणा साहिब पहुंच जाये; दूसरा, भाई लछमण सिंघ धारोवाली उसी रात चंदरकोट आ जाये, जहां भाई करतार सिंघ झब्बर का जत्था उन्हें मिल जाएगा। जब इस फैसले का पता भाई तेजा सिंघ समुंदरी, मास्टर तारा सिंघ तथा स. हरचरन सिंघ को चला तो वे शीघ्रता से १९ फरवरी को लाहौर में अकाली अखबार के दफ़्तर पहुंचे, जहां स. सरदूल सिंघ कवीशर, मास्टर सुंदर सिंघ लायलपुरी, स. जसवंत सिंघ झबाल तथा भाई दलीप सिंघ सांगला भी जा पहुंचे। फैसला सर्वसम्मति के साथ यह हुआ कि निश्चित तारीख से पहले कोई भी जत्था श्री ननकाणा साहिब न पहुंचे, मगर उस समय तक भाई लछमण सिंघ तथा भाई टहिल सिंघ के जत्थे अरदास करके चल पड़े थे। २० फरवरी, १९२१ ई की सुबह को जत्था जन्म-स्थान (श्री गुरु नानक देव जी) के अंदर दाखिल हुआ। भाई लछमण सिंघ श्री गुरु ग्रंथ साहिब की ताबिआ में बैठ गए। 'आसा की वार' का कीर्तन आरंभ हुआ। सिंघों के पास कोई हथियार नहीं था और न ही कोई हथियार ले जाने का उन्हें ख़्याल था।

जब १५० के करीब सिंघ अंदर दाख़िल हुए तो कपटी महंत नरैण दास ने सब दरवाजे बंद करवाकर मोल खरीदे बदामश--रांझा, रिहाणा, माछी तथा अन्य गुंडों को सोची-समझी साजिश के तहत कार्यवाही करने का हुक्म दिया। पल भर में ही सिंघों को गोलियों, बरछों, छवियों तथा अन्य मारू हथियारों से बड़ी बेरहमी से शहीद कर दिया। लाशों का ढेर लगवाकर, लकड़ियों पर मिट्टी का तेल डालकर जलाने का हुक्म दिया। तड़पते हुए घायल एवं जिंदा सिंघ भी पकड़कर अग्नि-भेंट किये गये। जब भाई दलीप सिंघ एवं भाई वरिआम सिंघ, जो उस समय भाई उत्तम सिंघ के कारखाने में थे, को पता चला तो वे तुरंत दरवाजे पर पहुंच गये। उनको भी शहीद कर दिया गया। भाई उत्तम सिंघ का खास कदम प्रशंसनीय था। उसने सिक्ख नेताओं को तारें भेजीं। अहंकारी नरैण दास घोड़े पर सवार होकर, ललकार कर गुंडों को कहता रहा कि "कोई भी सिंघ बचकर न जाने पाए; आग में जलाकर इनका नामो-निशान मिटा दो!" कइयों को जंड के वृक्ष के साथ बांधकर नीचे आग लगाई गई। लकड़ियां कम होने के कारण कई अधमरे झुलस गये, जिनकी हालत देखी नहीं जाती थी। यह खबर जंगल की आग की तरह चारों तरफ फैल गई। रोष में आए जिला शेखूपुरा तथा लायलपुर के लगभग २२०० सिंघ स. करतार सिंघ झब्बर के नेतृत्व में श्री ननकाणा साहिब पहुंचे। सरकारी अधिकारियों ने सिंघों को जब जोश में आते हुए देखा तो वक्त की नब्ज को पहचानकर गुरुद्वारा साहिब की चाबियां जत्थेदार के हाथ में पकड़ा दीं। महंत नरैण दास ने यह खूनी साका अंग्रेजों की शह पर किया था। सिंघों की शहीदियों का प्रतिक्रम यह हुआ कि कुकर्मी महंतों के चंगुल से गुरुद्वारा साहिबान आज़ाद हो गए।

सिंघों की जिंदादिली की एक अन्य उदाहरण
श्री ननकाणा साहिब का शहीदी साका

-स. प्रीत सिंघ*

सबको पता है कि गुरुद्वारा जन्म-स्थान श्री गुरु नानक देव जी, श्री ननकाणा साहिब (पाकिस्तान) के नाम ७०० से अधिक मुरब्बे जमीन है। १८४९ ई में अंग्रेजों ने पंजाब पर कब्जा कर लिया तथा महाराजा दलीप सिंघ को इंग्लैंड ले गये। कुछ वर्षों बाद अंग्रेजों ने सभी दरियाओं से नहरें निकालकर जमीनों को पानी देना शुरू कर दिया। पानी देने से फसलें खूब होने लगीं। श्री ननकाणा साहिब की जमीन में से लाखों रुपये की आमदन होने लगी। गुरुद्वारा साहिब पर काबिज़ महंत ऐश करते, शराबें पीते, वेश्याएं नचाते। इनका मुखिया महंत नरैण दास था। वह भी शराब पीता तथा गुरु-घर में वेश्याएं नचाता था।

एक बार एक सिंधी सिक्ख अपनी पत्नी एवं लड़की के साथ गुरुद्वारा जन्म-स्थान श्री ननकाणा साहिब के दर्शन के लिए आया। महंत के आदमियों ने उसकी लड़की के साथ अभद्र व्यवहार किया। एक बार अमावस के दिन गांव जड़ां वाला से कुछ महिलाएं श्री ननकाणा साहिब आईं। सरोवर में स्नान करते समय महंत के आदमियों ने उन महिलाओं के साथ भी अभद्र व्यवहार किया। इस खबर का पता जब शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी को लगा तब कमेटी ने फैसला किया कि महंत को श्री ननकाणा साहिब (४,५ मार्च, १९२१ को) जाकर समझाया जाये। महंत को शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के फैसले का पता चल गया कि सिक्ख जत्थे आ रहे हैं तो उसने काफी बदमाश इकट्ठा कर लिये। भारी संख्या में छवियां, कुल्हाड़े, तलवारें, बंदूकें, पिसतौलें, बारूद तथा कई बोरियां कारतूसों की, मिट्टी के तेल के कई पीपे, पेट्रोल तथा लकड़ियां जमा कर लीं। अंग्रेज सरकार महंतों का पक्ष लेती थी, इसलिए कई गुरुद्वारों में मोर्चे लगाते समय सिंघों को शहीदियां देनी पड़ीं।

महंत की इस कार्यवाही का जब भाई लछमण सिंघ धारोवाली को पता चला तो उसने स. तेजा सिंघ समुंदरी, भाई बूटा सिंघ तथा अन्य सिंघों के साथ बातचीत की कि महंत मार्च १९२१ को सभी सिक्ख लीडरों को खत्म कर देगा। इससे पहले कई हजार सिंघों का जत्था श्री ननकाणा साहिब जाये और गुरुद्वारा साहिब पर कब्जा कर ले। भाई करतार सिंघ झब्बर तथा भाई लछमण सिंघ को पता चला कि १९, २० फरवरी, १९२१ ई को सनातन धर्म की मीटिंग होगी तथा महंत नरैण दास इस मीटिंग में जरूर जायेगा कोई खून-खराबा न हो, इस लिए दो-तीन हजार सिंघ ले जाकर २० फरवरी, १९२१ ई को गुरुद्वारा साहिब पर कब्जा कर लिया जाये। यह खबर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर के पास पहुंच गई। कमेटी ने चूढ़काणे आदमी भेजे तथा भाई करतार सिंघ

*गांव धुड़िआल, डाक: सारोबाद, वाया आदमपुर, जिला जलंधर।

झब्बर का जत्था श्री ननकाणा साहिब जाने से रोका। भाई लछमण सिंघ धारोवाली अपना जत्था लेकर १९ फरवरी, १९२१ ई, शनीवार को संध्या समय चल पड़ा तथा गांव नजामपुर, देवा सिंघ वाला, मूला सिंघ वाला, चेलियांवाला, डल्ला चंदा सिंघ वाला से कोटला काहलवां तथा धामीआं होता हुआ मेटीआणा पहुंचा।

हमारे गांव धनूंआणा ९१ र: ब: से १९ फरवरी, १९२१ ई को जत्थेदार सुंदर सिंघ हुंदल के साथ १३ सिंघों का जत्था (कुछ दूसरे गांवों से अतिथि आये हुए थे; दो सिंघ गांव फराला से, एक गांव माणिक-घंमण तथा एक गांव सिहाड़ का था) भाई लछमण सिंघ के जत्थे को मेटीआणा जा मिला। यहां से भाई लछमण सिंघ ने हमारे गांव के भाई धीर सिंघ तथा एक अन्य सिंघ को चंदरकोट की झाल पर भाई करतार सिंघ झब्बर के जत्थे को देखने के लिए भेजा। भाई लछमण सिंघ उस समय अरदासा करके चल पड़े थे। जब भाई धीर सिंघ चंदरकोट की झाल पर पहुंचे तो वहां पर कोई जत्था नहीं था। तब भाई धीर सिंघ तथा दूसरा सिंघ बहुत देर से श्री ननकाणा साहिब पहुंचे। भाई धीर सिंघ दूसरे सिंघ को साथ लेकर एक दुकानदार के घर चले गये। इस दुकानदार ने धनूंआणा से आकर श्री ननकाणा साहिब में दुकान खोली हुई थीं।

भाई करतार सिंघ झब्बर ने भाई लछमण सिंघ के जत्थे को रोकने के लिए भाई दलीप सिंघ को भेजा कि शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का हुक्म है कि कोई भी जत्था श्री ननकाणा साहिब अभी न जाये तथा अपने गांवों को वापिस मुड़ जाये। १९-२० फरवरी की सारी रात भाई दलीप सिंघ जत्थे से न मिल सका। आखिर वह थककर श्री ननकाणा साहिब स. उत्तम सिंघ के कपास के कारखाने में आकर सो गया। भाई दलीप सिंघ ने भाई वरिआम सिंघ को चिट्ठी देकर भेजा कि भाई लछमण सिंघ का जत्था रोका जाये। भाई वरिआम सिंघ को श्री ननकाणा साहिब के बिलकुल पास में जत्था मिला तथा उसे चिट्ठी दिखाई। भाई लछमण सिंघ ने जवाब दिया कि हम अरदासा कर चुके हैं, अब हम वापिस नहीं मुड़ेंगे। तब भाई वरिआम सिंघ वापिस भाई दलीप सिंघ के पास चला गया।

२० फरवरी, १९२१ ई को सुबह ही जत्था गुरुद्वारा जन्म-स्थान के अंदर दाखिल हो गया। भाई लछमण सिंघ श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की ताबिआ में बैठ गये तथा शेष सिंघ आसा की वार का कीर्तन करने लग गये। महंत नरैण दास रेलवे स्टेशन पर गया हुआ था। जब महंत के गुंडों को जत्थे के आने का पता चला तो वे घोड़े लेकर स्टेशन की ओर गए। उनके स्टेशन पर पहुंचने से पहले गाड़ी चल पड़ी थी। तब उन्होंने घोड़े दौड़ाये तथा बारबटन स्टेशन पर गाड़ी पहुंचने से पहले पहुंच गये। महंत को गाड़ी से उतार कर वे श्री ननकाणा साहिब जल्द ही पहुंच गये। महंत ने आते ही अपने तमाम आदमियों को सिंघों को कत्ल करने का हुक्म दे दिया। बाहर सीढ़ियां लगाकर सब बदमाश दर्शनी ड्योढ़ी तथा दरवाजों पर चढ़ गये और उन्होनें फायर करने शुरू कर दिये। बाहर के सभी सिंघ ज़ख्मी हो गये। अब बदमाश छवियां लेकर चुबारे से नीचे उतरे और ज़ख्मी सिंघों के टुकड़े-टुकड़े करके मिट्टी का तेल तथा पेट्रोल डालकर उन्हें आग लगा दी। चौखंडी का उत्तर दिशा की तरफ का दरवाजा तोड़कर उस पर मिट्टी का तेल छिड़का दिया तथा अंदर गोलियां चलाने लग गये। बहुत सारी

गोलियां श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन स्वरूप को भी लगीं। भीतर के सिंघों को शहीद कर दिया। भाई लछमण सिंघ को जड़ के वृक्ष से उल्टा बांध कर, मिट्‌टी का तेल डालकर आग लगा दी।

थोड़ी देर बाद महंत एवं उसके कुछ बदमाश गुरुद्वारा साहिब से बाहर निकले। अन्य गुंडे शहीद सिंघों की लाशों को इकट्‌ठा करके आग लगाते थे। स. उत्तम सिंघ के कारखाने में जब भाई दलीप सिंघ तथा भाई वरिआम सिंघ ने गोली चलने की आवाज सुनी तो वे दोनों गुरुद्वारा जन्म-स्थान की ओर चल पड़े। भाई दलीप सिंघ ने कहा, "महंत जी, यह कार्य क्यों किया?" महंत एवं उसके आदमियों ने उन दोनों को भी गोलियों से ज़ख़्मी कर दिया तथा जख़्मियों को कुम्हारों की भट्‌ठी में फेंक दिया। इनका यादगारी-स्थान 'शहीदगंज' सरोवर से पश्चिम तथा गुरुद्वारा साहिब से दक्षिण दिशा में है। एक मुसलमान लड़की ने भी महंत के इस काम का बुरा मनाया। महंत ने उसको भी गोली मार दी और भट्‌ठी में फेंक दिया। महंत ने लड़की के वारिसों को काफी रकम दी, वे चुप हो गये।

इस साके की खबर उसी वक्त स. करम सिंघ स्टेशन मास्टर ने लाहौर सरकार, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर, शेखूपुरा तथा लायलपुर में टेलीग्राम द्वारा भेजी। हमारे गांव धनूंआणा शाम ३ बजे शहीदी साके का पता चला। दूसरे दिन २१ फरवरी, १९२१ ई सोमवार को सिंघों की अपने गांवों से श्री ननकाणा साहिब की तरफ रवानगी शुरू हो गई। भाई करतार सिंघ झब्बर २२०० सिंघों का जत्था लेकर आये। हरेक सिंघ के पास कोई-न-कोई हथियार था। कुछ सिंघ सियालकोट से आये। इनमें रागी भाई हीरा सिंघ भी थे। लाहौर से कमिश्नर अंग्रेज फौज लेकर स्पेशल गाड़ी द्वारा पहुंचा। अंग्रेज फौज गुरुद्वारा जन्म-स्थान के सामने मशीनगनें लगाकर बैठ गई।

सिंघ बहुत गुस्से में थे तथा आगे बढ़ते जा रहे थे। कमिश्नर ने अंग्रेज फौज गुरुद्वारा साहिब के सामने से हटा ली तथा गुरुद्वारा साहिब की चाबियां सिंघों को दे दीं। सिंघ गुरुद्वारा जन्म-स्थान के अंदर दाखिल हुए। उन्होंने शहीद सिंघों के शरीर देखे--किसी की टांग नहीं, बहुतों के शीश नहीं तथा कइयों की बाजुयें नहीं। कोई भी पहचाना नहीं जा रहा था। इसके बाद उन्होंने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बीड़ देखी। रागी भाई हीरा सिंघ ने बीड़ में से गोलियां निकालीं। उस दिन शहीद सिंघों का अंतिम संस्कार न हो सका। सिंघों ने कहा कि कल २२ फरवरी, १९२१ ई, दिन मंगलवार को करेंगे। इस दिन पंजाब का गवर्नर अपनी कैबेनिट के सदस्यों के साथ श्री ननकाणा साहिब पहुंचा। उन्होंने साके के शहीद सिंघों के शरीर देखे तथा शहीद सिंघों के प्रति बहुत दुख मनाया। यह दुख तो उनका मात्र दिखावे का ही था, क्योंकि सरकार तो महंतों की मदद करती थी। शहीद सिंघों का अंतिम संस्कार २३ फरवरी, १९२१ ई, दिन बुधवार को किया गया। यह स्थान गुरुद्वारा शहीदगंज साहिब की उत्तर दिशा में है।

सरकार ने सिंघों के भारी इकट्‌ठ के सामने घुटने टेक दिये। सिंघों की फतह हुई तथा गुरुद्वारा जन्म-स्थान श्री गुरु नानक देव जी, श्री ननकाणा साहिब महंतों से आजाद हो गया।

सिक्ख संप्रदायों के प्रति हुए कुछ कार्यों का विवरण

*-डॉ. गुरमेल सिंघ**

संप्रदायों का गुरमति के प्रचार में डाला योगदान ऐतिहासिक महत्ता वाला है, किंतु इनके बारे में हुए कार्य (एक-दो को छोड़कर) ज्यादा गंभीर अथवा संतोषजनक नहीं हैं। अभी बड़ा तथा मूल कार्य तो इनके हस्तलिखित साहित्य को संपादित करके छापे का जामा पहनाने का है।

यहां हम खोजार्थियों, पाठकों तथा जिज्ञासुओं की सहायता के लिए सिक्ख-संप्रदायों के बारे में कुछ कार्यों की सूची दे रहे हैं ताकि खोज-क्षेत्र में काम करने वाले सज्जनों की कुछ सहायता हो सके तथा वे इन कार्यों से उत्साहित होकर अन्य क्षेत्रों में भी ऐसा कार्य करें :

* डॉ श्रीचंद उपाध्याय, तत्व-दर्शन : उदासीन, जलंधर, तिथिहीन
* अमरजीत सिंघ (संपादक), पंजाबी टीकाकारी, इतिहासकारी ते पत्रकारी : कुझ दृष्टिकोण, पटियाला-१९८९
* अरजन सिंघ मुनी, इतिहास निरमल पंचायती अखाड़ा, कनखल-१९५२
* (ज्ञानी) ईशर सिंघ नारा, इतिहास बाबा सिरीचंद अते उदासीन संप्रदाय, दिल्ली-१९५९
* संत रेण, श्री मति नानक बिजै ग्रंथ (जीराक्स कॉपी), पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला तथा हस्तलिखित गांव भूदन, निकट मलेरकोटला, जिला संगरूर (पंजाब)
* शबद-सलोक (सुथरा), लाहौर-१९०५
* शमशेर सिंघ अशोक, सोढी मिहरबान दा जीवन ते साहित, श्री अमृतसर-१९६८,
* शमशेर सिंघ अशोक, पंजाब दीआं लहिरां पटियाला-१९५४
* शिवराम दास उदासी, उदासीआं दा सच्चा इतिहास, श्री अमृतसर, तिथिहीन
* सीताराम चतुर्वेदी, भारत के उदासीन संत, काशी, संवत् २०२४
* सुच्चदानंद शर्मा (डॉ.), उदासी संप्रदाय और कवि संतरेण, आगरा, तिथिहीन
* सुरजीत सिंघ (डॉ.), (संपादक), परची भाई अड्डण शाह की, भाई सहिज राम, पटियाला-१९८८
* सुरिंदर सिंघ (डॉ.), निरमले संतां दी पंजाबी साहित नूं देण, चंडीगढ़-१९७५ (अप्रकाशित पी. एच. डी. थीसिस)
* सूबा सिंघ (डॉ.), मिहरबान रचित जनम साखी दा धारमिक-समाजिक अधिऐन, श्री अमृतसर-१९८९ (अप्रकाशित पी. एच. डी. थीसिस)
* शेर सिंघ (डॉ.), गिआनी सुंदर सिंघ भिंडरांवाले (गिआनी संप्रदाय), श्री अमृतसर, तिथिहीन
* हरनाम सिंघ 'शान' (डॉ.), श्री गुरु ग्रंथ साहिब दी कोशकारी, भाषा विभाग, पटियाला-१९९७
* हरबंस कौर (गिल), सेवापंथीआं दी पंजाबी वारतक नूं देण, पटियाला (टाइप्ड डिसर्टेशन)

**श्री गुरु ग्रंथ साहिब अध्ययन विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२, मो : ९०४१०-४६३७२*

* हरमहेंद्र सिंघ (बेदी) (डॉ.), गुरमुखी लिपि में उपलब्ध हिंदी भक्ति साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन, श्री अमृतसर-१९९३
* हरिभजन सिंघ (डॉ.), गुरमुखी लिपि में हिंदी काव्य, दिल्ली-१९६३
* हीरा सिंघ महंत (संपादक), पोथी आसावरीआं-भाई सहिज राम। परची श्री भाई सेवाराम जी/परची श्री भाई कन्हईया जी आदि, श्री अमृतसर/ गोनिआणा-१९५१-६३
* कलिआण दास उदासी, इतिहास महातमा श्रीचंद जगत गुरु जी उदासी सिक्खां दा, नाभा, बि. सं. २०३४/१९७७ ई
* किरपाल सिंघ (डॉ.), मनोहर दास मिहरबान: जीवन अते रचनावां, पटियाला-१९७४
* कृष्णा बांसल (डॉ.), सुखमनी सहंसरनामा, पटियाला (टाईप्ड पी. एच. डी. शोध प्रबंध)
* कृष्ण कुमारी बांसल, सोढी हरि जी क्रित गोसटां मिहरबान कीआं, संगरूर-१९७७
* गंडा सिंघ (डॉ.), पंजाब, पटियाला-१९६२
* गंडा सिंघ (डॉ.). कूकिआं दी विथिआ, श्री अमृतसर-१९४४ (दूसरी बार पटियाला से १९८० में)
* गणेशा सिंघ महंत, निरमल भूषण अरथात इतिहास निरमल भेख, श्री अमृतसर-१९३७
* गणेशा सिंघ महंत, भारत मत दरपण, श्री अमृतसर-१९२६
* गिआन इंदर सिंघ, गुलाबदासी संप्रदाय : रचना अते विचार, श्री अमृतसर-१९८४ (अप्रकाशित पी. एच. डी. थीसिस)
* ज्ञानी गिआन सिंघ, निरमल पंथ प्रदीपिका, कनखल-१९६२ (दूसरी बार)
* गुरदीप कौर किरन, पंजाबी वारतक गोशटां (एक आलोचनात्मक अध्ययन), चंडीगढ़-१९७९.
* गुरनाम कौर (डॉ.) (संपादक), उदासी संपरदा दा अकादमिक परिपेख, पटियाला-१९९५
* गुरबखश सिंघ (ज्ञानी), सिक्ख संप्रदावां, तरनतारन-१९४४
* गुरमुख सिंघ (डॉ.), (संपादक), परची भाई अड्डण शाह/परची भाई सेवा राम/ परची भाई कन्हईया जी/परचीआं फकीरां कीआं-सहिज राम/पोथी आसावरी/इतिहास सेवा पंथीआं आदि, गोनिआणा मंडी (पंजाब)-१९९५-२००३
* गुरमुख सिंघ (डॉ.), सेवापंथीआं दी पंजाबी साहित नूं देण, पटियाला-१९८६
* गुरमुख सिंघ (डॉ.), (संपादक), पारस भाग-क्रित भाई गाडू जी, लुधियाना-१९८३
* डॉ गुरमोहन सिंघ (वालीआ), सोढी हरि जी : जीवन ते रचना, पटियाला-१९८५
* डॉ गुरमोहन सिंघ (वालीआ), सोढी मिहरबान दी गद्द रचना : इक विशलेषण, श्री अमृतसर-१९९२
* गोबिंद सिंघ (लांबा), साखीआं अड्डण शाह ते बचन महांपुरखां दे, लुधियाना-१९७३
* गोबिंद नाथ राजगुरू (डॉ.), गुरमुखी लिपि में हिंदी गद्य, दिल्ली-१९६२
* गोबिंद नाथ राजगुरु (डॉ.), (संपादक), गोष्ठि गुरु मिहरबान, चंडीगढ़-१९७४
* चंद्रकांत लाली (डॉ.), पंजाब प्रांतीय हिंदी साहित्य का इतिहास, दिल्ली-१९९५
* जसविंदर सिंघ तथा हरमिंदर सिंघ (संपादक),

नामधारी लहिर, श्री अमृतसर-२००४
* जीत सिंघ सीतल (डॉ.), गुरू कीआं लाडलीआं फौजां, श्री अमृतसर-१९८८
* जोगिंदर सिंघ (डॉ.). जपु जी दे टीके : समीखिआतमक अधिऐन, पटियाला-१९८१
* तरलोचन सिंघ (बिदी) (डॉ.), पंजाबी वारतक दा अलोचनातमक अधिऐन, दिल्ली-१९७२
* तारन सिंघ (डॉ.), गुरबाणी दीआं विआखिआ प्रणालीआं, पटियाला-१९८०
* पंडित तारा सिंघ नरोत्तम, श्री गुरमति निरणै सागर, कनखल-१९७९ (दूसरी बार)
* दलीप सिंघ नामधारी, कूका लहिर, चंडीगढ़-२००५
* दिआल सिंघ, बाबे नानक दा निरमल पंथ, लाहौर-१९३५
* दिआल सिंघ, निरमल पंथ दरशन (४-भाग), नई दिल्ली-१९५२-६५
* नछत्तर सिंघ मल्ली, पंजाब विच परची साहित, चंडीगढ़-१९८३ (अप्रकाशित पी. एच. डी. थीसिस)
* नरिंदर कौर (भाटिया) (डॉ.), मिहरबान वाली जनम साखी भगत कबीर जी की : संपादन ते विवेचन, श्री अमृतसर-१९९५
* नरेंद्रपाल सिंघ (कपूर), संत काव्य, जपु जी और टीका परंपरा, कुरुक्षेत्र-२००३
* नरेंद्रपाल सिंघ (कपूर), जपु एवं उनके टीकाकार, पटियाला-२००१
* ज्ञानी नाहर सिंघ, नामधारी इतिहास, लुधियाना-१९५५
* परशुराम चतुर्वेदी, उत्तरी भारत की संत परंपरा, इलाहाबाद-२०२१ बि.
* पिआरा सिंघ पदम, बचन गोबिंद लोकां दे, पटियाला-१९८२
* पिआरा सिंघ पदम, सिक्ख संप्रदावली, पटियाला-१९९०
* प्रताप सिंघ महंत, निरमल पंथ दरपण (संप्रदाय जलाल), जगराओं-१९७०
* प्रो. प्रीतम सिंघ (संपादक), पारस भाग, लुधियाना-१९५२
* प्रो. प्रीतम सिंघ (संपादक), निरमल संप्रदाइ, श्री अमृतसर-१९८१
* बलजिंदर कौर (जोशी) (डॉ.), सोढी हरि जी दी वारतक, पटियाला-२००३
* ज्ञानी बलवंत सिंघ कोठागुरू, श्री निरमल पंथ बोध, हरिद्वार-१९९८
* बलबीर सिंघ (डॉ.), श्री चरण हरि विसथार, श्री अमृतसर-१९४४
* बलबीर सिंघ (नंदा) (डॉ.), पुरातन सिक्ख संप्रदावां, चंडीगढ़-१९८४
* ब्रहमादि उदासीन, गुरू उदासीन मत दरपण, सखर (सिंध)-१९२३
* भगत सिंघ (डॉ.), गिआनी गिआन सिंघ, पटियाला-१९७८
* रण सिंघ (डॉ.), निरमल पंथ : निरणे विचार, श्री अमृतसर, तिथिहीन
* भाई रणधीर सिंघ, उदासी सिक्खां दी विथिआ, श्री अमृतसर-१९७२
* रतन सिंघ (जग्गी) (डॉ.), गुरबाणी टीके : अनंदघण, पटियाला-१९७०
* लाल सिंघ (संपादक), पंजाब का हिंदी साहित्य को योगदान, पटियाला-१९७०
* भाई लाल चंद, श्री संत रतन माला, संपादक-महंत हीरा सिंघ, पटियाला-१९५४
* संत वसाखा सिंघ, मालवा इतिहास (तीन भाग), किशनपुर-१९५४

शोध-पेपर (कुछ महत्वपूर्ण पत्रिकाओं में से)
* अजमेर सिंघ (डॉ.), साहित संपरदावां दा

सोमा : गुरू गोबिंद सिंघ, खोज पत्रिका, अंक-४८

* अरजन सिंघ मुनी, आदि ग्रंथ दे टीके, पंजाबी दुनीआं, फरवरी-१९६५
* इंदर सिंघ चकरवरती, बाबा मिहरबान दी रचना, पंजाबी दुनीआं, अक्तूबर-१९६३
* शमशेर सिंघ अशोक, निरमले साधू ते उन्हां दा साहित, पंजाबी दुनीआं, सितंबर-१९६४
* सवरन सिंघ सनेही, नामधारीआं दी पंजाबी साहित नूं देण, खोज पत्रिका, अंक-२४
* सुरिंदर सिंघ (शेरगिल) (डॉ.), निरमला संपरदाइ दा पंजाबी साहित विच योगदान : आलोचना, जुलाई-सितंबर-१९८२
* सुरिंदर सिंघ, निरमले संतां दुआरा रचित पंजाबी कावि, खोज पत्रिका, अंक-२८
* हरमहेंद्र सिंघ (बेदी) (डॉ.), गुरबाणी दी हिंदी टीकाकारी, पंजाबी दुनीआं, अप्रैल-१९८६, खोज दरपण, जुलाई-१९८४
* गुरचरन सिंघ (डॉ.), निरंजनी संपरदा अते उसदा साहित, खोज पत्रिका, अंक-१
* गुरदेव सिंघ (डॉ.), निरमल कवि पंडित गुलाब सिंघ ते भावर सम्रित ग्रंथ, पंजाबी दुनीआं, जुलाई-१९७५
* गुरमुख सिंघ (डॉ.), सेवा पंथी संप्रदाइ, खोज पत्रिका, अंक-४८
* गुरमोहन सिंघ (वालीआ) (डॉ.), मिहरबान संप्रदाइ दी पंजाबी वारतक नूं देण, खोज पत्रिका, अंक-२१
* गोबिंद नाथ राजगुरू (डॉ.), पंडित तारा सिंघ नरोतम, पंजाबी दुनीआं, नवंबर-१९६०
* तारन सिंघ (डॉ.), निरमले विदवानां दी गुरबाणी टीका पधती दा सरवेखण, नानक प्रकाश पत्रिका, जून-१९७६
* नवरत्न कपूर (डॉ.), निरमला संप्रदाइ : सरूप अते पंजाबी साहित, खोज पत्रिका, अंक-४४
* पिआर सिंघ (डॉ.), श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी दे परयाय, कोश ते शबराथ, नानक प्रकाश पत्रिका, दिसंबर-१९७६
* पिआरा सिंघ पदम (डॉ.), गोसटि साहित, अलोचना, अगस्त-१९६०
* पिआरा सिंघ पदम (डॉ.), उदासी साधूआं दी साहित सेवा, आलोचना, अप्रैल-सितंबर-१९९१
* पिआरा सिंघ पदम (डॉ.), श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी दे परयाय, कोश ते शबदारथ, नानक प्रकाश पत्रिका, दिसंबर-१९७६
* पिआरा सिंघ पदम (डॉ.), मिहरबानीआं दी साहित सेवा, खोज पत्रिका, अंक-१, १९६७-६८
* पिआरा सिंघ पदम (डॉ.), श्री संतरेण जी दी पंजाबी रचना, पंजाबी दुनीआं, जून-१९५४
* पिआरा सिंघ पदम (डॉ.), बाबा संतरेण ते श्रीमति नानक बिजै ग्रंथ, नानक प्रकाश पत्रिका, जून-१९७४
* पिआरा सिंघ पदम (डॉ.), गुरू ग्रंथ साहिब दी कोशकारी, नानक प्रकाश पत्रिका, दिसंबर-१९७६
* प्रो. प्रीतम सिंघ, जपु हरीआ जी : आलोचना, जनवरी-दिसंबर-१९७०
* प्रो. प्रीतम सिंघ, निरमला संप्रदाइ दा भविक्ख, खोज पत्रिका, अंक-१५
* प्रो. प्रीतम सिंघ, उदासी संप्रदाइ : भूत ते

भविक्ख, खोज पत्रिका, अंक-३६
* राजिंदर सिंघ शासतरी, निरमले संतां दे डेरे, पंजाबी दुनीआं, मई-१९७७

विशेषांक

* ऐतिहासिक-पत्र (सुथरे शाही विशेष) संपादक-रणधीर सिंघ, सिक्ख हिस्टरी सोसायटी, श्री अमृतसर, अंक-३, १९५१-५२ (सैंची ३)
* ऐतिहासिक-पत्र (दिवाने साथ विशेष) संपादक-रणधीर सिंघ, सिक्ख हिस्टटी सोसायटी, श्री अमृतसर, जिल्द-५, १९५३
* गुरमति प्रकाश (निहंग सिंघ विशेषांक), मार्च २००३, शिरोमणि गु: प्र: कमेटी, श्री अमृतसर

संप्रदाय-पत्रकाएं

* निरमल पत्र, निरमल गजट, निरमल समाचार, निरमल उदेश, निरमल संदेश, निहंग सिंघ संदेश आदि।

सूची बनने के बाद प्राप्त हुए काम (बिना किसी क्रम के)

* सवरनजीत कौर (डॉ.), संत गरीबदास : जीवन संप्रदाय एवं काव्य का विवेचन, लुधियाना-१९९९
* सवरनजीत कौर (डॉ.), गुरू गरीबदास जी : जीवन ते चिंतन, लुधियाना-२००२
* सवरनजीत कौर (डॉ.), उत्तरी भारत दीआं प्रमुख निरगुण संप्रदावां, लुधियाना-२००५
* सुरजीत चंदर (डॉ.), निरमला संप्रदाइ ते महंत चरण सिंघ, धरमकोट (मोगा, पंजाब)-२००२
* ज्ञानी मुकत राम (संपादक), श्री संतरेण ग्रंथावली, भूदन (मलेरकोटला)-१९५३
* डॉ गोबिंद सिंघ (लांबा), निरंजनी संपरदाइ ते उन्हां दा साहित, परख, चंडीगढ़-१९७४
* गुरचरन सिंघ (डॉ.), निरंजनी संपरदा अते उसदा साहित, खोज पत्रिका, पटियाला, अंक-१, १९६७-६८
* जगन्नाथ शर्मा, उदासीन संप्रदाय के हिंदी कवि तथा उनका साहित्य, गुड़गांव-१९८१
* शोभा प्रभाकर (डॉ.), पंजाब के उदासी संप्रदाय के सशक्त हस्ताक्षर कवि अमीर दास, पुस्तक- पंजाब का मध्यकालीन हिंदी साहित्य, संपादक प्रो. हरमहेंद्र सिंघ (बेदी), श्री अमृतसर-२००४
* गुरचरन सिंघ सेक, जीवन चरित्र गरीब दास जी, लुधियाना-२००१
* गुरचरन सिंघ सेक, नानकसर संप्रदा, तलवंडी धाम, लुधियाना-२०००
* गुरचरन सिंघ सेक (संप्रदाइ), सुआमी ब्रहमानंद भूरी वाले, लुधियाना-२००३
* किशन चंद गुप्ता, गरीब दास दीआं काफीआं, १९८०
* किशन चंद गुप्ता, Sri Garib Das : Haryana's Saint of Humanity-1976

पंजाब हिस्टरी कान्फ्रेंस प्रोसीडिंग्ज, २७वां सेशन, २८-३० मार्च, १९९५ में पेपर:

* जसमित्तर सिंघ (डॉ.), उदासीन भेख अते योगराज बाबा श्रीचंद जी
* जोगिंदर सिंघ (डॉ.), निरमले संतां ते उदासी संतां दी सिक्ख समाज नूं देण
* जसमित्तर सिंघ (डॉ.), उन्नवीं सदी दा सिक्ख समाज अते निरंकारी संप्रदाइ
* देविंदर कुमार, अलौकिक भेख जां संपरदा : दिवाने

* बलदेव उपाध्याय, भागवत संप्रदाय (भारतवर्ष के मुख्य वैष्णव संप्रदाय का एक गंभीर अध्ययन, काशी–१९५३
* सतपाल रणदेव (प्रो.), पंजाब की संत परंपरा, जलंधर–१९६१
* मोती सिंघ (डॉ.), निर्गुण साहित्य : सांस्कृतिक, पृष्ठभूमि, वाराणसी–१९५९
* गोबिंद त्रिगुणायत (डॉ.), हिंदी की निर्गुण काव्यधारा और उसकी दार्शनिक पृष्ठभूमि, कानपुर–१९६१
* सच्चिदानंद (डॉ.), उदासी संप्रदाय और कवि संतरेण, देहरादून–१९६७
* गिरीश (डॉ.). उदासीन संत निगमानंद और उनका साहित्य, साहिबाबाद–१९८१
* शोभा प्राशर (डॉ.), उदासी संप्रदाय का हिंदी साहित्य, दिल्ली–१९९७
* राजगुरू कांता (डॉ.), सेवा पंथ और उनका साहित्य, दिल्ली–१९८१
* सीताराम चतुर्वेदी, भारत के उदासीन संत, काशी–१९७७
* Sulakkhan Singh, Heterodoxy In The Sikh Tradition, Jalandhar-1999
* गोबिंद नाथ राजगुरू (डॉ.), पारस भाग, चंडीगढ़–१९९०
* प्रीतम सिंघ (प्रो.), पारस भाग, लुधियाना–१९५२
* नरिंदर सिंघ सोच, भगवान श्रीचंद्र दरशन, श्री अमृतसर–१९९२
* जुगल किशोर त्रिपाठी, पंडित गुलाब सिंघ कृत रामायण का अनुशीलन, पटियाला–१९९२

अंग्रेजी (Book-B, Paper-P)

* Darshan Singh (Dr.) How did Nirmalas Preach? Journal of Sikh Studies, Sri Amritsar, Feb.-1978 (P)
* Darshan Singh (Dr.), The Nirmalas and Their Art of Preaching, Punjab History Conference, Patiala, March 17-19, 1979 (P)
* Gurnek Singh (Dr.), Guru Granth Sahib : Interpretations, meaning and nature, Delhi-1998 (B)
* Joginder Singh, Origin of Nirmala Panth, SHR, Khalsa College, Library, No. 2901 (Tract)
* Mandanjeet Kaur (Dr.), Suthrashahi : A Forgotton Sect of the Punjab, Journal of Sikh Studies, Sri Amritsar, Feb. 1983 (P)
* Marigendra Singh Kanwar, Nirmal Panth, Punjab History Conference, Patiala, March 10, 1968 (P)
* Rajinder Kaur (Dr.), Sikh Exegetical Writing : A Study In The Various Tradition, Patiala-1988 (Unpublished Ph.D. thesis)
* Sulakkhan Singh, The Udasis Under Sikh Rule (1750-1850), Sri Amritsar, 1985 (Unpublished, Ph.D. thesis)
* Principal Teja Singh, Sikhism Its Ideals and Institutions, Madras-1951

गुर सिखी बारीक है . . ११

*-डॉ सत्येंद्रपाल सिंघ**

प्रेम गुरमुख की राह है और इसी पर गुरमुख की भक्ति टिकी हुई है। प्रेम मात्र शब्दों का खेल नहीं है। एक गुरमुख जानता है कि जिसे व्यवहार में उतारा जा सके वही वास्तविक प्रेम और परमात्मा की राह है। प्रेम एक आचरण है। एक ऐसा आचरण जिसे 'स्व' को मिटाकर ही धारण किया जा सकता है। अपने सांसारिक जीवन में मनुष्य को बहुत-से कर्म करने होते हैं जिन्हें वह भिन्न-भिन्न भाव और अवस्था में करता है, किंतु प्रेम का आचरण एक सर्वोत्कृष्ट कर्म है जो विशुद्ध आध्यात्मिक स्थिति प्राप्त कर लेने के बाद ही किया जा सकता है। एक गुरमुख परमात्मा की कृपा से ही इस अवस्था को प्राप्त करता है और प्रेम में डूब कर परमात्मा से जुड़ता है। भाई गुरदास जी ने उन लक्षणों का वर्णन किया है जो मनुष्य को प्रेम की उच्च अवस्था में पहुंचाते हैं :

मुरदा होइ मुरीदु न गली होवणा।
साबरु सिदकि सहीदु भरम भउ खोवणा।
(वार ३:१८)

पहला लक्षण भाई गुरदास जी ने बताया है कि मात्र बातों से ही गुरसिक्ख और गुरमुख नहीं बना जा सकता। इसके लिए उन सारे सांसारिक आश्रयों, आधारों को छोड़ देना चाहिये जिन पर टिक कर हम जीवन की सफलता की कामना करते हैं। ये सारे आधार निरर्थक और तत्वहीन हैं, एक मात्र आधार परमात्मा का ही है। जब सारे सांसारिक आश्रयों से मोह और विश्वास टूट जाता है, सारे भ्रम-शंकाओं का निवारण हो जाता है, मन में संतोष व संतृप्ति का भाव उत्पन्न हो जाता है, तब मुक्ति मिल जाती है। ऐसे मनुष्य पर सांसारिक मोह-माया के रंग अपना कोई प्रभाव नहीं छोड़ पाते। उसे सांसारिक पदार्थ आकर्षित और उत्तेजित नहीं करते। उसे सामाजिक मान से न तो प्रसन्नता होती है और न ही अपमान से कोई निराशा होती है। जीवित-मृतक की यह अवधारणा सिक्ख गुरु साहिबान की एक पूर्ण और अनूठी व्यवहारिक सोच का परिणाम थी। मानव सभ्यता का इतिहास ही यह है कि मनुष्य स्वयं को बुद्धिमान और शक्तिशाली समझकर अपना प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयास करता रहा है और यही प्रयास उसके विनाश तथा समाज के विखंडन का कारण बनता रहा है। परमात्मा से दूर रहने वाला मनुष्य ही इस गति को प्राप्त होता है। ऐसा मनुष्य अपने मन पर विश्वास करता है, अपने मन की सुनता और देखता है। उसके मन में मोह-माया का अंधकार व्याप्त होता है, इसी लिये उसे मनमुख कहा गया है। मनमुख स्वयं भी कुछ प्राप्त नहीं कर पाता और किसी को कुछ देने योग्य भी नहीं होता :

मनमुख ऊभे सुकि गए ना फलु तिंना छाउ ॥
तिंना पासि न बैसीऐ ओना घरु न गिराउ ॥
कटीअहि तै नित जालीअहि ओना सबदु न नाउ ॥ *(पन्ना ६६)*

उपरोक्त वचन के अनुसार मनमुख उस वृक्ष की तरह है जो खड़े-खड़े ही सूख गया है और जिस पर न तो कोई फल लगे हैं और न ही वो कोई छांव दे रहा है। उसका अंतर भी

**E-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो : ९४१५९६०५३३*

खोखला है और अन्य के लिये उसकी कोई उपयोगिता भी नहीं है। ऐसे लोगों से दूर रहने में ही हित है। जो स्वयं ही गुण-ज्ञान से रहित हैं उनके पास जाकर क्या प्राप्त होने वाला है? ऐसे लोगों से कोई सम्बंध नहीं रखना चाहिये। मनमुख परमात्मा के गुणों और परमात्मा की सत्ता से अनभिज्ञ रहता है और उसकी आस्था भी परमात्मा पर टिककर नहीं रहती। मनमुख के सारे कर्म व्यर्थ जाते हैं :

हुकमु न जाणहि बपुड़े भूले फिरहि गवार ॥
मनहठि करम कमावदे नित नित होहि खुआरु ॥
अंतरि सांति न आवई ना सचि लगै पिआरु ॥
(पन्ना ६६)

मनमुख का मन सदैव अशांत रहता है, जबकि एक गुरमुख जो 'स्व' को मिटाकर परमात्मा को अपने जीवन का आधार बना लेता है उसका चित्त सहजता के भाव से निर्मल हो उठता है और सारी व्यग्रताएं समाप्त हो जाती हैं:

गुरमुखि ब्रहमु हरीआवला साचै सहजि सुभाइ ॥
साखा तीनि निवारीआ एक सबदि लिव लाइ ॥
अंम्रित फलु हरि एकु है आपे देइ खवाइ ॥
(पन्ना ६६)

गुरमुख रूपी वृक्ष में परमात्मा के प्रेम का एक ही फल लगता है। यह फल परमात्मा सदैव कृपा करके देता है और उससे संतृप्ति प्राप्त हो जाती है। गुरमुख को परमात्मा के प्रेम का फल ही प्रिय है। इस फल के मिलते ही गुरमुख के सारे अवगुण समाप्त हो जाते हैं और उसमें गुणों का वास हो जाता है :

अउगण वीसरिआ गुणी घरु कीआ राम ॥
एको रवि रहिआ अवरु न बीआ राम ॥
रवि रहिआ सोई अवरु न कोई मन ही ते मनु मानिआ ॥
जिनि जल थल त्रिभवण घटु घटु थापिआ सो प्रभु गुरमुखि जानिआ ॥ *(पन्ना ११११)*

गुरमुख एकनिष्ठ हो जाता है इसी लिये उसके मन में ठहराव आ जाता है और वह सृष्टि के सृजनकर्ता परमात्मा को पा लेता है। एक गुरमुख को यह स्पष्ट होता है कि सब कुछ परमात्मा की कृपा और उसकी आज्ञा से ही चल रहा है तथा ऐसी अन्य कोई सत्ता नहीं है। परमात्मा की आज्ञा और कृपा का कोई विकल्प नहीं है। एक गुरमुख की चेतना में जब परमात्मा की सत्ता स्पष्ट है तो वह उसी में अपने सुख को ढूंढता है और उसकी कृपा से अधिक से अधिक पाने का प्रयास करता रहता है।

जिस सब्र और संतोष की बात भाई गुरदास जी ने अपनी तीसरी वार की अठारहवीं पउड़ी में की है वह एक गुरमुख के मन में सच्चे ज्ञान के प्रकाश से ही उत्पन्न होता है। यह ज्ञान है परमात्मा के गुणों का और मोह-माया के धोखे का। गुरमुख मोह-माया से सावधान हो जाता है और परमात्मा में अपने जीवन की मुश्किलों का समाधान खोजता है:

गुरमुखि गिआनु धिआनु मनि मानु ॥
गुरमुखि महली महलु पछानु ॥
गुरमुखि सुरति सबदु नीसानु ॥१॥
ऐसे प्रेम भगति वीचारी ॥
गुरमुखि साचा नामु मुरारी ॥ *(पन्ना ४१४)*

इस वचन में परमात्मा के प्रेम की दिशा का संकेत दिया गया है। एक गुरमुख के मन में जब प्रेम का भाव उपज और परमात्मा का वास उसकी चेतना में इस तरह हो जाये कि उसकी चेतना परमात्मा के गुणों का प्रतीक बन जाये। गुरमुख का आचार-विचार परमात्मा के गुणों को प्रकट करने वाला होता है और उसकी संगति व्यक्तियों और स्थितियों को परमात्मा की ओर खींचने वाली होती है। गुरमुख परमात्मा की राह और परमात्मा को पहचान चुका होता है, अत: उसके अस्तित्व में परमात्मा का विचार मुखर हो

उठता है, उस पर सदैव प्रसन्नता छाई रहती है और शोक उसे छू तक नहीं पाता:

साचा हरखु नाही तिसु सोगु ॥
अंम्रितु गिआनु महा रसु भोगु ॥
पंच समाई सुखी सभु लोगु ॥ (पन्ना ४१४)

जब सब्र और संतोष गुरमुख के जीवन में आ जाता है तो वह हर्ष से भरपूर हो उठता है, किंतु परमात्मा के प्रेम का यह हर्ष उसे कभी भी बेपरवाह नहीं होने देता वरन् परमात्मा के प्रति प्रेम की उसकी पिपासा को और अधिक बढ़ा देता है। परमात्मा के प्रेम का रंग ही ऐसा है कि जैसे-जैसे गहरा होता जाता है, आनंद बढ़ता जाता है और इस आनंद की प्यास कभी कम नहीं होती। गुरमुख सारा जीवन परमात्मा की अधिक से अधिक कामना में गुजारता है, क्योंकि परमात्मा अथाह है, इसलिये उसका प्रेम भी अथाह है। गुरमुख का जीवन कम पड़ जाता है, किंतु उसके प्रेम का प्याला नहीं। उस प्रेम के प्याले को गुरमुख बार-बार पीना चाहता है:

पैरी पै पा खाकु मुरीदै थीवणा।
गुर मूरति मुसताकु मरि मरि जीवणा।
(भाई गुरदास जी, वार ३:१९)

गुरमुख का लक्षण है कि वह कभी भी परमात्मा को अपनी चेतना से विस्मृत नहीं होने देना चाहता। वह उस असीम को अपनी दृष्टि में, अपनी चेतना में अधिक से अधिक समा लेना चाहता है, भले ही इसके लिये उसे कितने ही जन्म क्यों न लेने पड़ें अर्थात् कितना ही प्रयास क्यों न करना पड़े। वह अपने को बार-बार मिटाकर भी और अपना सर्वस्व समर्पित करके भी परमात्मा से अधिकाधिक जुड़ना चाहता है। गुरमुख स्वयं को परमात्मा का खरीदा हुआ चाकर समझता है :

गोला मुल खरीदु कारे जोवणा।
ना तिसु भुख न नीद न खाणा सोवणा।
(वार ३:१८)

जिस तरह खरीदा हुआ दास सदैव अपने स्वामी की सेवा में दिन-रात जुटा रहता है और अपनी भूख-प्यास, नींद आदि की भी चिंता नहीं करता है, गुरमुख भी परमात्मा के प्रेम में इसी तरह लीन हो जाता है कि उसे बस, परमात्मा ही याद रहता है।

गुरमुख परमात्मा की बात को उस तरह करना और सुनना चाहता है जैसे एक नवविवाहिता अपने पति की बातें। जो उसके पति की प्रशंसा की बातें करता है वही उसे भला लगता है। पति उसे सम्पूर्ण आनंद का स्वरूप लगता है और वह उसमें जीवन का आनंद पा लेना चाहती है। इसी तरह गुरमुख भी परमात्मा के प्रेम के रंग में पूरी तरह रंगा होता है। परमात्मा की हर बात गुरमुख के मन को मोह लेती है :

सुनहु सहेरी मिलन बात कहउ सगरो अहं मिटावहु तउ घर ही लालनु पावहु ॥
तब रस मंगल गुन गावहु ॥
आनद रूप धिआवहु ॥
नानकु दुआरै आइओ ॥
तउ मै लालनु पाइओ री ॥
मोहन रूपु दिखावै ॥
अब मोहि नीद सुहावै ॥
सभ मेरी तिखा बुझानी ॥
अब मै सहजि समानी ॥
मीठी पिरहि कहानी ॥
मोहनु लालनु पाइओ री ॥ (पन्ना ८३०)

गुरमुख वो है जिसे सच्चा आनंद परमात्मा को पा लेने में ही प्राप्त होता है, जिसकी चेतना में सदैव परमात्मा रहता है और जो परमात्मा के प्रेम के कभी खाली न होने वाले प्याले को सदैव पीते रहना चाहता है।

गुरबाणी चिंतनधारा : ५५

सुखमनी साहिब की विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

तीसरी असटपदी
सलोकु ॥
बहु सासत्र बहु सिम्रिती पेखे सरब ढढोलि ॥
पूजसि नाही हरि हरे नानक नाम अमोल ॥
(पन्ना २६५)

पंचम पातशाह सुखमनी साहिब की तीसरी असटपदी के सलोक में पावन फरमान करते हैं कि मैंने अनेकों शास्त्रों और स्मृतियों को सब तरह से खोज लिया है अर्थात ऋषियों-मुनियों द्वारा लिखित अनेक शास्त्रों और स्मृतियों का पठन-पाठन कर विचार कर लिया है लेकिन कोई भी वस्तु इस अमूल्य हरि के नाम के समान नहीं है, जैसा कि गुरबाणी में अन्यत्र भी समझाया गया है :

-सिम्रिति बेद पुराण पुकारनि पोथीआ ॥
नाम बिना सभि कूड़ु गाल्ही होछीआ ॥
(पन्ना ७६१)

-जाप ताप गिआन सभि धिआन ॥
खट सासत्र सिम्रित वखिआन ॥
जोग अभिआस करम ध्रम किरिआ ॥
सगल तिआगि बन मधे फिरिआ ॥
अनिक प्रकार कीए बहु जतना ॥
पुंन दान होमे बहु रतना ॥
सरीरु कटाइ होमै करि राती ॥
वरत नेम करै बहु भाती ॥
नही तुलि राम नाम बीचार ॥
नानक गुरमुखि नामु जपीऐ इक बार ॥१॥

तीसरी असटपदी की पहली पउड़ी में पंचम पातशाह प्रभु-नाम को ही समस्त धार्मिक क्रियाओं में से श्रेष्ठ मानते हुए गुरु के उपदेश द्वारा नाम जपने को ही प्रेरित करते हैं।

श्री गुरु अरजन देव जी फरमान करते हैं कि बेशक कोई जप-तप, समस्त ज्ञान-ध्यान कर ले, चाहे कोई षट्दर्शन (छह दर्शनों) और अनेक तरह से स्मृतियों की व्याख्या श्रवण कर ले, अनेक तरह के योगाभ्यास (योग की क्रियाओं का अभ्यास) कर ले, यही नहीं अन्य अनेक कर्म-धर्म भी अपना ले अर्थात् कर्मकांडी समस्त क्रिया-कलापों को अपना ले; चाहे समस्त परिवार (सभी रिश्तेदारों-संबंधियों) तथा सम्पूर्ण संपत्ति का त्याग करके जंगलों में फिरता रहे और अनेक यत्न करता रहे, सैकड़ों पुण्य-दान करता हुआ घी आदि पदार्थों की अग्नि में आहुति दे, शरीर को रत्ती-रत्ती (तिल-तिल) कर अग्नि-भेंट कर दे, अनेक तरह के व्रतों के बंधन भी करे अर्थात् अनेक नियमों एवं संयमों का पालन भी करे, फिर भी ये समस्त साधन 'नाम' की विचार की बराबरी नहीं कर सकते। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि गुरु द्वारा प्राप्त प्रभु-नाम का किया जाप सर्वोत्तम है। प्रभु-जाप समस्त कर्मों से ऊंचा स्थान रखता है।

नउ खंड प्रिथमी फिरै चिरु जीवै ॥
महा उदासु तपीसरु थीवै ॥
अगनि माहि होमत परान ॥
कनिक अस्व हैवर भूमि दान ॥
निउली करम करै बहु आसन ॥

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो: ९९२९७-६२५२३*

जैन मारग संजम अति साधन ॥
निमख निमख करि सरीरु कटावै ॥
तउ भी हउमै मैलु न जावै ॥
हरि के नाम समसरि कुछ नाहि ॥
नानक गुरमुखि नामु जपत गति पाहि ॥२॥

तीसरी असटपदी की दूसरी पउड़ी में बताया गया है कि हरि-नाम के तुल्य कोई भी साधना नहीं हो सकती। इस भाव को दृढ़ करवाते हुए गुरदेव पंचम पातशाह फरमान करते हैं कि अगर कोई मनुष्य संपूर्ण धरती पर घूमता फिरे, बहुत लंबी आयु तक जीवित रहे, संसार से विरक्त होकर बहुत बड़ा तपस्वी बन जाये; बेशक, हवन (यज्ञ) की अग्नि में सामग्री के स्थान पर स्वयं को होम कर दे अर्थात् अपने प्राणों की आहुति दे दे; सोना, घोड़े, हाथी तथा भूमि दान कर दे; यही नहीं, न्योलि कर्म अर्थात् पेट को कठिन साधना से दायें-बायें घुमाकर आंतों को साफ कर ले, हठयोग की अनेक क्रियाएं कर ले, जैन मत का अनुसरण करता हुआ अत्यंत कठिन संयम अपना ले, शरीर को रत्ती-रत्ती कटवा ले, फिर भी मन से अहंकार की मैल दूर नहीं होती।

गुरु पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि कोई भी साधना प्रभु-नाम के अभ्यास की बराबरी नहीं कर सकती। अतः मनुष्य को चाहिए कि वह सतिगुरु के सन्मुख होकर नाम-सिमरन करे और जो ऐसा करते हैं वे ऊंची आत्मिक अवस्था सहजता से हासिल कर लेते हैं।

नाम-सिमरन के अभ्यास के अतिरिक्त किसी भी साधन से अहंकार विनिष्ट नहीं होता। गुरबाणी आशयानुसार अहंकार तथा प्रभु-नाम दो विरोधी तत्व हैं जो कदाचित एक स्थान पर नहीं रह सकते, जैसे एक म्यान में दो तलवारें नहीं समा सकतीं। गुरबाणी का प्रमाण है :

हउमै नावै नालि विरोधु है दुइ न वसहि इक ठाइ ॥
हउमै विचि सेवा न होवई ता मनु बिरथा जाइ ॥ *(पन्ना ५६०)*

यही नहीं, श्री गुरु नानक देव जी से जब सिधों ने सवाल किया कि जीव का संसार में बार-बार जन्म लेने एवं दुखी होने का कारण क्या है और इस रोग की औषधि क्या है, तो गुरदेव का सहज जवाब था :

हउमै विचि जगु उपजै पुरखा नामि विसरिऐ दुखु पाई ॥
गुरमुखि होवै सु गिआनु ततु बीचारै हउमै सबदि जलाए ॥
तनु मनु निरमलु निरमल बाणी साचै रहै समाए ॥ *(पन्ना ९४६)*

गुरमुख ही ज्ञान-तत्व का चिंतन करता है और 'शबद' द्वारा अहंकार को जला देता है। परिणामस्वरूप उसका तन-मन निर्मल हो जाता है और वह सत्य में लीन हो जाता है।

श्री गुरु अंगद देव जी ने भी हउमै को दीर्घ रोग माना है और साथ ही स्पष्ट किया है कि इसकी औषधि किसी वैद्य-हकीम के पास नहीं अपितु गुरु-वचन की कमाई में ही है। अतः गुरु-दर्शाये मार्ग पर चल कर ही इस रोग से मुक्त हुआ जा सकता है।

मन कामना तीरथ देह छुटै ॥
गरबु गुमानु न मन ते हुटै ॥
सोच करै दिनसु अरु राति ॥
मन की मैलु न तन ते जाति ॥
इसु देही कउ बहु साधना करै ॥
मन ते कबहू न बिखिआ टरै ॥
जलि धोवै बहु देह अनीति ॥
सुध कहा होइ काची भीति ॥

मन हरि के नाम की महिमा ऊच ॥
नानक नामि उधरे पतित बहु मूच ॥३॥

इस असटपदी की तीसरी पउड़ी में कर्मकांड की एक बहुत बड़ी भ्रांति से निजात दिलवाने हेतु गुरु पातशाह ने कलयुगी जीवों का मार्गदर्शन किया है कि हृदय की पवित्रता के बिना वाह्य समस्त क्रिया-कर्म व्यर्थ ही समझो।

गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि अनेक प्राणियों की यह मनोकामना होती है कि तीर्थ-स्थलों पर जाकर यह शरीर रूपी चोला छोड़ा जाए, लेकिन ऐसा करने से भी मन का अहंकार कदाचित कम नहीं होता। कई इस भावना से ही तीर्थ-स्थान पर निवास करते हैं कि इस तीर्थ विशेष पर ही मेरे शरीर का अगर अंत होता है तो यह मेरी विशेष उपलब्धि होगी। विशेष तीर्थ-स्थानों पर प्राण त्यागने वाले स्वयं को स्वर्ग में ही निवास मिलने के भ्रम में रहते हैं। ऐसा करने से प्राय: वे और भी अभिमानी हो जाते हैं। गुरु साहिब तो स्पष्ट करते हैं कि तीर्थों पर दिन-रात स्नान करने वाले प्राणी की मन की मैल मात्र तन के स्नान से नहीं जाती। इस शरीर को साधने हेतु अर्थात् अपने वश में करने हेतु चाहे जीव अनेकों यत्न करे फिर भी मन से माया का विष नहीं उतरता। हरि-नाम की महिमा समस्त साधनों से ऊंची एवं पवित्र है। गुरु पंचम पातशाह फरमान करते हैं कि प्रभु-नाम की बरकत से बड़े-बड़े पापी जीव भी विकारों से मुक्त हो जाते हैं। भक्त कबीर जी अपने अंतिम समय में दुनिया में पवित्र मानी जाने वाली 'काशी' नगरी को छोड़ कर 'मगहर' चले गए थे। समझा जाता था कि मगहर की धरती पर प्राण त्यागने वाले नरक को जाते हैं, लेकिन संतों-भक्तों के व्यवहारिक जीवन से तथा जीवन-अनुभवों से हमें यही शिक्षा मिलती है कि यह सब कुछ हमारे कर्मों पर निर्भर करता है, स्थान विशेष से कोई अंतर नहीं पड़ता।

बहुतु सिआणप जम का भउ बिआपै ॥
अनिक जतन करि त्रिसन ना ध्रापै ॥
भेख अनेक अगनि नही बुझै ॥
कोटि उपाव दरगह नही सिझै ॥
छूटसि नाही ऊभ पइआलि ॥
मोहि बिआपहि माइआ जालि ॥
अवर करतूति सगली जमु डानै ॥
गोविंद भजन बिनु तिलु नही मानै ॥
हरि का नामु जपत दुखु जाइ ॥
नानक बोलै सहजि सुभाइ ॥४॥

उपरोक्त पउड़ी में गुरु पातशाह ने माया से उत्पन्न तृष्णा रोग की ओर संकेत किया है और साथ ही हिदायत की है कि लाखों चतुराइयों से भी इस रोग से बचना नामुमकिन है। समस्त दुखों को दूर करने वाले परमेश्वर का नाम सहज-स्वभाव जपते रहना चाहिए।

गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि जीव की बहुत-सी चतुराइयां भी उसे यमदूतों के भय से मुक्त नहीं कर सकतीं, अपितु जीव को यमों का भय और भी अधिक भयभीत करता रहता है। कारण, अनेक प्रयत्नों से भी माया की तृष्णा नहीं मिटती, अनेकों धार्मिक दिखावे करने से तृष्णा की ज्वाला शांत नहीं होती। ऐसे वाह्य करोड़ों आडंबर करके भी परमेश्वर की दरगाह में जगह मिलनी नामुमकिन है। इन कोशिशों से चाहे जीव उड़कर आकाश तक पहुंच जाये अथवा पाताल की गहराई में उतर जाये, माया के प्रभाव से नहीं बच सकता अर्थात् यह सब कुछ करता हुआ जीव मोह-माया के जाल में अत्यधिक फंसता जाता है। यही मोह-माया उसके जी का जंजाल बन जाती है। प्रभु-नाम के अतिरिक्त समस्त करतूतों को यमराज दंडित करता है। प्रभु-नाम के बिना यमराज तिल-मात्र भी प्रसन्न नहीं होता अर्थात् वह ईश्वर-भजन

के बिना किसी दूसरे कर्म को तिल-मात्र भी स्वीकार नहीं करता। पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी फरमान करते हैं कि जो जीव सहजावस्था में प्रेमपूर्वक हरि-नाम उच्चारण करते हैं, उनके दुख, संताप, समस्त क्लेश मिट जाते हैं।

तृष्णा की अग्नि में सारा संसार जल रहा है। जैसे आग में जितना ईंधन डालो वह और भड़कती है, ठीक उसी तरह इच्छाओं की पूर्ति रूपी ईंधन से भी हमारी तृष्णा की आग और भड़कती है। इच्छाओं का दायरा जितना बड़ा होगा उतना ही मनुष्य अधिक दुखी रहता है, यह तो केवल हरि-नाम से ही शांत हो सकती है, जैसा कि अन्यत्र भी गुरबाणी में समझाया गया है :

त्रिसना बुझै हरि कै नामि ॥
महा संतोखु होवै गुर बचनी प्रभ सिउ लागै पूरन धिआनु ॥१॥रहाउ॥
महा कलोल बुझहि माइआ के करि किरपा मेरे दीन दइआल ॥
अपणा नामु देहि जपि जीवा पूरन होइ दास की घाल ॥१॥ (पन्ना ६८२-८३)

परमेश्वर के नाम में ही संपूर्ण शांति और सुख समाहित हैं, इसलिए जो मनसा-वाचा-कर्मणा द्वारा प्रभु की शरण में हैं उनकी तृष्णा रूपी अग्नि प्रभु स्वयं शांत कर देते हैं, यथा गुरबाणी-प्रमाण है :

-त्रिसना अगनि प्रभि आपि बुझाई ॥
नानक उधरे प्रभ सरणाई ॥ (पन्ना ६८४)
-चारि पदारथ जे को मागै ॥
साध जना की सेवा लागै ॥
जे को आपुना दूखु मिटावै ॥
हरि हरि नामु रिदै सद गावै ॥
जे को अपुनी सोभा लोरै ॥
साधसंगि इह हउमै छोरै ॥
जे को जनम मरण ते डरै ॥
साध जना की सरनी परै ॥
जिसु जन कउ प्रभ दरस पिआसा ॥
नानक ता कै बलि बलि जासा ॥५॥

प्रस्तुत पउड़ी में साधु की संगति एवं सेवा के महत्व को समझाते हुए गुरु पातशाह ने कलयुगी जीवों का मार्गदर्शन किया है कि अगर जीव चारों पदार्थों की अभिलाषा रखता है और उसकी पूर्ति चाहता है तो उसे अपना जीवन कैसा बनाना होगा। रहमतों के सागर पंचम गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि जिस किसी जीव के हृदय में चार पदार्थों (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) की प्राप्ति की इच्छा है, उसे साधु-संतों की सेवा में लीन हो जाना चाहिए।

अगर कोई अपना दुख जड़ से मिटाना चाहता है तो उसे परमेश्वर का नाम सदैव हृदय में बसाकर रखना चाहिए अर्थात् श्वास-श्वास हरि-नाम का गायन करना चाहिए। अगर कोई मनुष्य जगत में अपनी शोभा (महिमा) चाहता है तो उसे चाहिए कि साधु-संतों की संगत में रहकर अहंकार को त्याग दे, निर्मल मन से संत-जनों की सेवा में लीन रहे। अगर कोई जन्म-मरण के फंदे अर्थात् आवागमन से भयभीत है तो उसे संत-जनों की शरण लेनी चाहिए। पंचम पातशाह फरमान करते हैं कि जिसके भी हृदय में प्रभु के दीदार की चाहत है मैं उस पर बलिहार जाता हूं।

हिंदू धर्म-ग्रंथों में मानव जीवन की सफलता के केंद्र-हिंदु चार पुरुषार्थ हैं। चिंतकों के चिंतनानुसार धर्म का अर्थ है--- कर्त्तव्य का सही ढंग से पलन करना; अर्थ---- सांसारिक आवश्यकताओं की पूर्ति। काम--- सांसारिक सफलताएं; मोक्ष से अभिप्राय आवागमन से पूर्णतया मुक्ति। इन चारों पदार्थों की प्राप्ति का सुगम मार्ग है संतों की संगति में रहना।

गुरबाणी में अन्यत्र भी इसी भाव को दृढ़ करवाया गया है, यथा :

साधसंगि आराधना हरि निधि आपार ॥
धरम अरथ अरु काम मोख देते नही बार ॥
(पन्ना ८१६)

यही नहीं, श्वास-श्वास सिमरन से समस्त कार्य संपन्न हो जाते हैं, जैसा कि पावन गुरबाणी का उपदेश है :

सिमरि सिमरि पूरन प्रभू कारज भए रासि ॥
करतार पुरि करता वसै संतन कै पासि ॥
(पन्ना ८१६)

जीव को गुरमुख-जनों की संगति में जाकर नाम-सिमरन का अभ्यासी हो जाने से समस्त फलों की प्राप्ति सहजता से हो जाती है।

सगल पुरख महि पुरखु प्रधानु ॥
साधसंगि जा का मिटै अभिमानु ॥
आपस कउ जो जाणै नीचा ॥
सोऊ गनीऐ सभ ते ऊचा ॥
जा का मनु होइ सगल की रीना ॥
हरि हरि नामु तिनि घटि घटि चीना ॥
मन अपुने ते बुरा मिटाना ॥
पेखै सगल स्रिसटि साजना ॥
सूख दूख जन सम द्रिसटेता ॥
नानक पाप पुंन नही लेपा ॥६॥

प्रस्तुत पउड़ी में गुरदेव पंचम पातशाह श्री गुरु नानक देव जी के पावन सिद्धांत- *"मिठतु नीवी नानका गुण चंगिआईआ ततु"* को दृढ़ करवाते हुए, साधु की संगति से हृदय में विनम्रता को धारण करने वाले व्यक्ति को ही सर्वश्रेष्ठ मानते हुए पावन फरमान करते हैं कि सतिसंगत में रहकर जो व्यक्ति निराभिमानी अर्थात् अहंकार से रहित हो जाता है वही समस्त मनुष्यों में श्रेष्ठ है अर्थात् वही सबसे बड़ा है। जो स्वयं को सबसे निम्न अर्थात् गरीब समझता है वास्तव में उसी को सबसे उत्तम समझना चाहिए; ऐसा व्यक्ति ही ईश्वर की दरगाह में सबसे ऊंचा समझा जाता है। जिसका मन सबकी चरण-धूलि बना रहता है अर्थात् जो सबके साथ विनम्रता से पेश आता है उसे सर्वत्र में प्रभु समाया हुआ दिखाई देता है, उसे कण-कण में ईश्वर के दीदार होते हैं। जिसने अपने मन से बुराई को मिटा दिया उसे सभी मित्रवत् दिखाई पड़ते हैं अर्थात् अपने हृदय को निर्मल करने वाला व्यक्ति सबके हृदय को निर्मल जानता हुआ, सबको हितैषी समझता है। पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि ऐसा मनुष्य सुख एवं दुख को समान दृष्टि से देखते हुए पाप-पुण्य में निर्लिप्त-भाव से रहता है। प्रो. साहिब सिंघ ने अंतिम पंक्ति का भावार्थ इस तरह स्पष्ट किया है कि ऐसे व्यक्तियों के मन को न कोई मंदा (निम्न) कार्य भटका सकता है और न ही स्वर्ग आदि के लालच कर या दुख-क्लेश से भयभीत होकर वे पुण्य कर्म करते हैं, उनका तो स्वभाव ही नेकी करना बन जाता है।

वास्तव में विनम्र व्यक्ति समदृष्टि वाला हो जाता है जिससे उसमें भ्रातृ-भावना एवं विश्वकुटुंबकम का भाव दृढ़ हो जाता है, जो कि समूची मानवता हेतु शांति एवं सद्भावना का पैगाम देते हैं। आज के विघटित होते नैतिक मूल्यों में ऐसे गुणों की समूची मानवता को दरकार है, जैसा कि गुरबाणी में अन्यत्र भी यही भाव दृढ़ करवाया गया है :

ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥
जो प्रभ कीनो सो भल मानिओ एह सुमति साधू ते पाई ॥
सभ महि रवि रहिआ प्रभु एकै पेखि पेखि नानक बिगसाई ॥ *(पन्ना १२९९)*

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-४९

उत्कृष्ट ढाडी एवं कवि - भाई मीर मुशकी

*-डॉ. राजेंद्र सिंह 'साहिल'**

दशमेश पिता के दरबार के ढाडियों में से एक ढाडी भाई मीर मुशकी भी बहुत उच्च कोटि के कवि थे। भाई मीर मुशकी ढाडी भाई मीर छबीले के साथी थे। दोनों मिलकर गुरु-दरबार में वीर रसात्मक 'वारों' का गायन किया करते थे।

भाई मीर मुशकी जितने अच्छे ढाडी थे, उतने ही अच्छे कवि भी थे। वीर रस प्रधान वारें गाने के कारण भाई मीर मुशकी का काव्य भी वीर रस-प्रधान ही था। भाई मीर मुशकी ने अपने काव्य में दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की वीरता एवं शौर्य का सुंदर वर्णन किया है। एक उदाहरण देखें :

बजै निशान डंक कौ, भजै तू भूप लंक कौ,
हनू दुराइ अंक कौ, न धीर धरै इंद जी।
मही चलै तला तलै, सुमेरु पात जयों हलै,
बराह ढाढ कौ दलै, डरै फरै फनिंद जी।
तजयो महेश धयान कौ, न रंग भासमान कौ,
परयो जु कंम प्रान कौ, दसों दिसैं गजिंद जी।
परी पुकार आन कै, चलयो सुठाठ ठान कै,
सनधबध ज्वान कै, चढ़यो गुरु गोबिंद जी।

वीर रस के कवि होने के कारण भाई मीर मुशकी का युद्ध-वर्णन बड़ा अद्‌भुत था। भाषा की रवानगी, शब्दों का चयन और छंद की लय युद्ध के दृश्य को साक्षात् उपस्थित कर देते हैं। ऐसे स्थलों पर भाई मीर मुशकी ने 'कड़खा' छंद का प्रयोग किया है। इस छंद में चार चरण होते हैं और प्रत्येक चरण में ३७-३७ मात्राएं होती हैं। यति हर चरण में बदलती रहती है। पहले में ८, दूसरे में १२, तीसरे में ८ और चौथे में ९ मात्राओं के बाद यति आती है।

भाई मीर मुशकी इस छंद में काव्य-रचना के पारंगत थे। उनके एक 'कड़खे' में युद्ध-वर्णन देखें :

बाण बंदूक हथ नालि गोला छुट्टै,
महां भय भीम कीनो कड़ाका।
सूर सामहि भिड़े देव दानव डरे,
लंकपति लरज़यो खा धड़ाका।
हूर बीरन बरी रत्त जोगनि तरी,
खोपरी दंत काली जड़ाका।
हंडूर कहिलूर जसवाल डडवाल लौं,
धार भाई भज्जी हवै भड़ाका।
करि दाहिने सदा स्री भगउती रखिआ करैं,
मीर मुशकी गावहि जस बांका।

दशमेश पिता के शौर्य का गायन और दशमेश पिता के द्वारा लड़ी गई जंगों का वर्णन करने वाला कवि भाई मीर मुशकी दशम पातशाह के दरबारी कवियों में विशेष स्थान रखता है।

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, मो: ९४१७२-७६२७१*

ख़बरनामा पाकिस्तान सरकार सिक्खों की ऐतिहासिक यादगारों की संभाल के प्रति लापरवाही दिखा रही है:जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर २५ जनवरी --पाकिस्तान के शहर लाहौर में स्थित सिक्ख जरनैल महाराजा शेर सिंघ की समाध तथा साथ में स्थित ऐतिहासिक बारांदरी, जो शेरशाह रोड पर ख़्वाजा सैयद आबादी में मौजूद है, को तहस-नहस करने के लिए की जा रही साजिशों के प्रति अख़बारों में आ रही लगातार सनसनीख़ेज एवं हृदयबेधक ख़बरों का शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने गंभीर नोटिस लेते हुए कहा कि पाकिस्तान में स्थित सिक्ख यादगारों का नामोनिशान मिटाने तथा उनकी देखरेख में की जा रही लापरवाही सम्बंधी जायजा लेने के लिए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी एक दस-सदस्यीय शिष्टमंडल पाकिस्तान में भेजेगी।

उन्होंने कहा कि गत दिनों पाकिस्तान औकाफ़ बोर्ड के चेयरमैन जनाब सैयद आसिफ हाशमी जब श्री हरिमंदर साहिब के दर्शन के लिए आये थे तो उस समय शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा सिक्खों की ऐतिहासिक यादगारों की उचित देखभाल करने के बारे में उन्हें एक पत्र भी दिया गया था। उन्होंने कहा कि इन विरासती यादगारों को हथियाने के लिए भू-माफिया ग्रुप कोई न कोई चालें चलता रहता है। उन्होंने कहा कि हमें पता चला है कि महाराजा शेर सिंघ की बारांदरी के स्थान पर लाहौर वेस्ट मैनेजमेंट कंपनी द्वारा कूड़े का डंप बनवाया गया है। उन्होंने कहा कि यह मामला केवल सिक्ख विरासती यादगारों पर कब्जा करने का नहीं बल्कि दुनिया में बसते समूचे सिक्ख भाईचारे की भावनाओं का है। पाकिस्तान सरकार को चाहिए कि वो अल्पसंख्यक कौमों की भावनाओं का सम्मान करते हुए महाराजा शेर सिंघ बारांदरी वाले स्थान से तुरंत कूड़े-कर्कट वाला डंप खत्म करवाए तथा बारांदरी एवं अन्य ऐतिहासिक यादगारों की देखभाल का काम तुरंत शुरू करवाये। उन्होंने कहा कि वीज़ा मिलने पर जल्द ही शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का दस-सदस्यीय शिष्टमंडल पाकिस्तान पहुंचकर सारी स्थिति का जायजा लेगा।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी देश-विदेश में स्थित गुरु-घरों के प्रति पूरी तरह से सतर्क है : स. दलमेघ सिंघ

श्री अमृतसर : ६ जनवरी -- कुछ अख़बारों में छपी ख़बर कि पाकिस्तान के शहर लाहौर के नौ-लक्खा बाज़ार में स्थित शहीद भाई तारू सिंघ जी के गुरुद्वारा साहिब पर वहां के लोगों द्वारा कब्ज़ा किया गया है, के जवाब में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के सचिव स: दलमेघ सिंघ ने कहा कि इस सम्बंध में पहले से ही दिल्ली में स्थित पाकिस्तान दूतावास के हाई कमिशनर को शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा पत्र लिखकर एतराज रूप में सूचित किया गया है। पाकिस्तान दूतावास के हाई कमिशनर से विस्तार से जवाब मिला है कि शहीद भाई तारू सिंघ जी का गुरुद्वारा साहिब तथा मस्जिद--हजरत शाहकाकू, दोनों पास-पास हैं। दोनों

धर्मों के त्योहार इकट्ठे आ जाने से वहां पर ऐसा भ्रमपूर्ण माहौल बन जाया करता है। भाई तारू सिंघ जी का शहीदी दिवस सिक्ख भाईचारे द्वारा श्री अखंड पाठ साहिब करवाकर मनाया जाता है तथा मुसलिम भाईचारा अपना त्योहार 'शबा-ए-बारात' मौन धारण करके मनाता है। गत वर्ष प्रशासन द्वारा दोनों धर्मों के नुमांइदों को इकट्ठा बिठाकर किए समझौते के तहत बारी-बारी से दोनों त्यौहार मनाये गए थे। स. दलमेघ सिंघ ने कहा कि दिल्ली स्थित पाकिस्तान दूतावास के पत्र के अनुसार, दोनों धर्मों के लोगों में कोई टकराव न हो, इसके लिए वहां के प्रशासन द्वारा पुलिस तैनात की गई थी। दोनों धर्मों के लोग आपसी प्यार तथा भाईचारक सांझ से रह रहे हैं। पहुंचे पत्र के अनुसार उन्होंने कहा कि पाकिस्तान में हर धर्म के लोगों को अपने रीति-रिवाज के अनुसार धार्मिक त्योहार मनाने की छूट है। स. दलमेघ सिंघ ने कहा कि शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा भारत के विदेश मंत्री श्री एस. एम. कृष्णा को भी गुरुद्वारा शहीद भाई तारू सिंघ जी की स्थिति से वाकिफ़ करवाया गया है। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी देश-विदेश में स्थित गुरु-घरों के प्रति पूरी तरह से सतर्क है। उन्होंने कहा कि हम ऐसे मामलों में भारत सरकार द्वारा तथा सीधे भी पाकिस्तान दूतावास से जानकारी लेते रहते हैं।

समूचे सिक्ख जगत को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के प्रकाश पर्व की शुभकामनायें : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : २९ दिसंबर -- दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के प्रकाश पर्व की समूचे सिक्ख जगत को शुभकामनायें देते हुए जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने कहा कि संसार के लोगों पर हो रहे जब्र-जुल्म को, अन्याय को मात देने के लिए १६९९ ई. वैसाखी वाले दिन दशमेश पिता ने श्री अनंदपुर साहिब की धरती पर न्यारा 'खालसा पंथ' स्थापित करके एक क्रांति ला दी।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के केंद्रीय कार्यालय से जारी प्रेस विज्ञप्ति में जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि दुनिया के इतिहास में कहीं भी ऐसी उदाहरण नहीं मिलती कि जब्र-जुल्म तथा अन्याय को मात देने के लिए किसी रहबर ने अपना सारा परिवार कुर्बान किया हो। उन्होंने कहा कि सिक्खी भेस में कुछ अंदरूनी तथा बाहरी ताकतें इस गौरवशाली इतिहास को कमजोर करने की ताक में हैं। हम सबको इकट्ठा होकर सिक्खी पर हो रहे इन हमलों का दृढ़ता से मुकाबला करना चाहिए। उन्होंने समूचे सिक्ख जगत को दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के प्रकाश पर्व की शुभकामनायें देते हुए फिर कहा कि हर परिवार का सदस्य दशमेश पिता जी द्वारा बख्शे खंडे-बाटे की पाहुल छककर गुरु के लड़ लगे तथा नशे के रुझान को ख़त्म करने में सहायी हो!

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०२-२०१२